વર્ષ ૨/૩ ૧-૮-૭૦

યુક્રાંદ

मैं तुम्हें क्या भेंट दूं ? क्या कोई कीमती पत्थर ? नहीं, नहीं। क्योंकि पत्थर आखिर पत्थर ही है। फिर कोई सुन्दर फूल ? नहीं, नहीं। क्योंकि फूल तो मैं दे नहीं पाऊंगा और मुरझा जायेगा। मैं तुम्हें अपने हृदय का प्रेम देता हूं। क्योंकि इस पूरे जगत में प्रेम ही अकेला है जो कि पत्थर नहीं है और प्रेम ही ऐसा है जो कि कभी मुरझाता नहीं। प्रेम मनुष्य के हृदय में परमात्मा की सुगन्ध है। प्रेम मनुष्य के प्राणों में परमात्मा का संगीत है।

—आचार्य रजनीश

आचार्य श्री के आगामी देश व्यापी कार्यक्रम

दिनांक	स्थान	कार्यक्रम	संयोजक
८, ९, १० एवं ११ अगस्त ७०.	अहमदाबाद	प्रवचन	श्री जयंती भाई, जीवन जागृति केन्द्र, डायचेम कार्पोरेशन, खाड़िया चार रास्ता, अहमदाबाद - १ फोन : २४०८३.
१२ अगस्त/१७ अगस्त/ १८ अगस्त ७०	बंबई	सत्संग	श्री ईश्वर बाबू, जीवन जागृति केन्द्र, बंबई : १ फोन : २६४५३०
१९ अगस्त/२४ अगस्त ७०	दिल्ली	———	श्री लाला सुन्दरलाल, बंगलो रोड, जवाहरनगर, दिल्ली : ७ फोन : २२७६५५
२०, २१, २२ एवं २३ अगस्त ७०	लुधियाना	प्रवचन	श्री कपिल मोहन, जीवन जागृति केन्द्र, क्वालिटी आइसक्रीम कं०, ६०, इंडस्ट्रियल एरिआ-ए लुधियाना

मुखपृष्ठ के चित्र : आचार्य श्री के प्रेम रस में डूबने हेतु आचार्य श्री के गृह नगर गाडरवारा में फिल्म जगत के सुप्रसिद्ध संगीतकार कल्याणजी (आचार्य श्री के साथ खुली जीप में,) क्रमशः ऊपर से कवि श्री इंदीवरजी पार्श्व गायिका सुश्री कमल बारोट, पार्श्व गायक श्री महेन्द्रकपूर, श्री हरिजी आर्य एवं श्री आनंदजी का पिछले महीनों आगमन हुआ था, उसी अवसर के चित्र।

छायाकार : श्री गया यादव, यादव स्टूडियो, गाडरवारा (म. प्र.)

एक कथ्य : एक दृष्टि

(आचार्य श्री की एक बोध कथा)

एक व्यक्ति ने मुझसे पूछा कि क्या आपको परमात्मा से कोई शिकायत नहीं ?

मैं क्या कहता ? थोड़ी देर तक तो चुप ही रह गया क्योंकि, जब तक परमात्मा का पता न हो तभीं तक शिकायत हो सकती है और जब तक शिकायत है तब तक उसका पता नहीं हो सकता।

परमात्मा की अनुभूति तो केवल उस चित्त में ही हो सकती है, जो कि सब आकांक्षाओं और अपेक्षाओं से मुक्त हो गया है। और जहां आकांक्षा नहीं, अपेक्षा नहीं, वहां शिकायत कैसी ?

जो है——जो हो रहा है, उसके सहज स्वीकार से ही उस चित्त भूमि का निर्माण होता है, जहां कि परमात्मा के बीज अंकुरित हो सकें।

एक हिब्रू कथा है, कभी एक फकीर हुआ—अकीबा। वह परमात्मा की खोज में भटकता था। प्रार्थना करते करते वह थक गया था, और उपवास करते करते उसके अंतिम दिन निकट आ गये थे। लेकिन परमात्मा दूर था, सो दूर ही रहा। फिर भी उसकी कोई शिकायत न थी। और शत्रु उसके पीछे पड़े थे। बुढ़ापे में भी उसे एक गाँव से दूसरे गांव भागना पड़ रहा था। सबने उसका साथ छोड़ दिया था। उसके पास एक कंदील थी, जिसके प्रकाश में वह धर्मशास्त्र पढ़ लेता था और एक मुर्गा जो उसे भोर होते ही जगा देता था और एक था गधा जिस पर वह एक गांव से दूसरे गाँव यात्रा करता रहता था—यही थे उसके साथी। और हृदय में परमात्मा के लिए प्रार्थना थी और धन्यवाद था। एक अमावस की अंधेरी रात्रि में बहुत थका मांदा वह एक गाँव में गया। किन्तु उस गांव में लोगों ने उसे शरण न दी। उसने उन्हें धन्यवाद दिया और परमात्मा को भी और गांव के बाहर एक सूखी बावली में ठहर गया। उसने अपनी कंदील जलाई लेकिन हवा के तेज झोंको ने उसे बुझा दिया। उसने परमात्मा को पुन: धन्यवाद दिया और विश्राम करने लेट गया लेकिन तभी एक भेड़िये ने उसके मुर्गे को मार डाला और एक सिंह उसके गधे को खा गया। उसने पुन: भगवान को धन्यवाद दिया और सोने की कोशिश की और तभी—उसी रात्रि जबकि वह बिल्कुल असहाय था भूखा और प्यासा और थका माँदा और उससे सब कुछ छीन लिया गया था उसका धन्यवाद देने वाला हृदय परमात्मा के दर्शन को उपलब्ध हुआ। उसने सत्य को जाना क्योंकि वह समता को और स्वीकार को उपलब्ध हो गया था। ●●

आचार्य श्री की अपनी अभय दृष्टि

चीन में एक बहुत बड़ा फकीर था, उसकी बड़ी ख्याति थी दूर-दूर तक ख्याति थी कि वह अभय को उपलब्ध हो गया है। फीयरलेसनेस को उपलब्ध हुआ है। वह भयभीत नहीं रहा है। वह सबसे बड़ी उपलब्धि है। क्योंकि जो आदमी अभय को उपलब्ध हो जाय वह ताजा, जवान चित्त पा लेता है, और ताजा जवान चित्त फौरन परमात्मा को जान लेता है। सत्य को जान लेता है। सत्य को जानने के लिए चाहिए ताजगी—फ्रेशनेस, जैसे सुबह की ठंड में होती है। जैसे सुबह की पहली किरण में होती है। और बूढ़े चित में सिर्फ गिर गये, सड़ गये फूलों की

दुर्गंध होती है, और विदा हो गई किरणों के पीछे का अंधेरा होना है। ताजा चित्त चाहिए। तो खबर मिली थी, सारे दूर-दूर तक खबर फैल गयी कि, एक फकीर अभय को उपलब्ध हो गया है।

एक युवक सन्यासी उस फकीर की खोज में गया। जंगल में, एक बहुत घने जंगल में, जहाँ बहुत भय था, वह फकीर वहां रहता था। जहां शेर दहाड़ करते थे, वहां पागल हाथी वृक्षों को उखाड़ देते थे, उनके ही बीच चट्टानों पर ही फकीर पड़ा रहता था। रात जहां अजगर रेंगते थे, वहाँ वह सोया रहता था निश्चिंत। युवक सन्यासी उसके पास गया। उसकी चट्टान के पास बैठ गया। उससे बातें करने लगा। तभी एक पागल हाथी दौड़ता हुआ निकला पास से। पत्थर उसकी चोटों से लुढ़क गये। वृक्ष गिर गये। वह युवक कंपने लगा खड़े होकर। उस बूढ़े सन्यासी के पीछे छिप गया। उसके हाँथ पैर कंप रहे हैं। वह बूढ़ा सन्यासी खूब हँसने लगा और उसने कहा : तुम अभी डरते हो ! तो सन्यासी कैसे हुआ ? क्योंकि जो डरता है उसका सन्यास से क्या संबंध है हालाँकि अधिक सन्यासी डर से ही सन्यासी हो गये हैं। पत्नी तक से डर के आदमी सन्यासी हो जाते हैं। और डर तो बहुत दूर है, बड़े डर तो दूर हैं, बड़े छोटे डरों से डरके आदमी सन्यासी हो जाता है। उस बूढ़े सन्यासी ने कहा, 'तुम डरते हो सन्यासी होकर : कैसे सन्यासी हो गये ? वह युवक कंप रहा है। उसने कहा कि मुझे बहुत भय लग गया। सब में बहुत डर लग गया। अभी सन्यास वगैरह कुछ ख्याल नहीं आता। थोड़ा पानी मिल सकेगा ? मेरे तो सब ओंठ सूख गये बोलना मुश्किल है। बूढ़ा उठा, वृक्ष के नीचे जहाँ उसका पानी रखा था, पानी लेने गया। जब तक बूढ़ा लौटा, उस युवक सन्यासी ने एक पत्थर उठाकर, उस चट्टान पर जिस पर बूढ़ा बैठता था, लेटता था, बुद्ध का नाम लिख दिया। लिख दिया 'नमो बुद्धाय'। बूढ़ा लौटा। चट्टान पर पैर रखने को था, नीचे दिखाई पड़ा, 'नमो बुद्धाय'। पैर कंप गया, चट्टान से नीचे उतर गया।

वह युवक खूब हँसने लगा। उसने कहा; डरते आप भी हैं। डर में कोई फर्क नहीं है। और मैं तो एक हाथी से डरा जो बहुत वास्तविक था। और एक लकीर से मैंने लिख दिया 'नमो बुद्धाय' तो पैर रखने में डर लगता है कि भगवान के नाम पर पैर न पड़ जाये ? किसका डर ज्यादा है ? वह युवक पूछने लगा। तो उस युवक ने कहा कि मैं खोजने आया था अभय, मैं पाता हूँ आप में सिर्फ निर्भय है, अभय नहीं है। निर्भय हैं सिर्फ। भय को मजबूत कर लिया है भीतर। चारों तरफ घेरा बना लिया है अभय का। सिंह नहीं डराता, पागल हाथी नहीं डराता, अजगर निकल जाते हैं, सख्त हैं बहुत आप, लेकिन जिसके आधार पर सख्त हुए हैं, वह आपका भय बना हुआ है। भगवान के आधार पर सख्त हो गए हैं। भगवान को सुरक्षा बना लिया है तो भगवान के खड़िया से लिखे नाम पर पैर रखने में डर लगता है !

उस युवक ने कहा; डरते आप भी हैं, डर में कोई फर्क नहीं पड़ा है। और ध्यान रहे, पागल हाथी से डर जाना बुद्धिमत्ता भी हो सकती है। जरूरी नहीं कि डर हो, बुद्धिमानी भी हो सकती है।

लेकिन नाम लिखे भगवान पर पैर रखने से डर जाना तो बुद्धिमानी भी नहीं कही जा सकती। पहला डर बहुत स्वाभाविक हो सकता है। दूसरा डर बहुत साइकोलाजीकल, बहुत मानसिक, बहुत भीतरी है। हम सब डरे हुए हैं, भीतर से, सब तरफ से मन से डरे हुए हैं, पकड़े हुए हैं। और हमारे भीतरी डरों का आधार वही होगा, जिसके आधार पर हमने दूसरे डरों को बाहर कर दिया है।

हम गाते हैं, "निर्बल के बल राम" गा रहे हैं, सुबह से बैठ कर कि, हे भगवान, निर्बल के बल तुम्हीं हो। किसी निर्बल का कोई बल 'राम' नहीं है, जिसकी निर्बलता गई फिर वही राम हो जाते हैं।

संकलन

जयवंती (जूनागढ़)

क्या है मार्ग.....ज्ञान भक्ति या कर्म ?

(आचार्य श्री का सी. तेजपाल कला भवन राजकोट, में दिया गया एक प्रवचन)

संकलन—सुश्री मीना, राजकोट ।

मेरे प्रिय आत्मन्,

अंधेरी रात हो तो सुबह की आशा होती है। आदमी भी एक अंधेरी रात है और उसमें भी सुबह की आशा की जा सकती है। कांटों से भरा हुआ पौधा हो तो उसमें भी फूल लगता है, आदमी भी कांटों से भरा हुआ एक पौधा है उसमें भी फूल की आशा की जा सकती है। बीज हो तो अंकुरित हो सकता है, विकसित हो सकता है, आदमी भी एक बीज है और उसमें भी विकास के सपने देखे जा सकते हैं। लेकिन साधारणतः मनुष्य बीज ही रह जाता है और वृक्ष नहीं हो पाता। साधारणतः मनुष्य कांटो से भरा हुआ एक पौधा ही रह जाता है और फूल नहीं खिल पाता, साधारणतः मनुष्य बीज ही रह जाता है और वृक्ष नहीं हो पाता, अंधेरी रात ही रह जाता है और प्रभात कभी नहीं हो पाता, एक सपना ही रह जाता है और सत्य कभी भी नहीं बन पाता। इसलिए प्रत्येक मनुष्य के सामने सवाल है कि मार्ग क्या है ? कैसे हम पहुँचे उस तक जिसे हो जाने के बाद कुछ और हो जाने की आकांक्षा शेष न रह जायेगी। कैसे उसे पा लें ?जिसे पा लेने के बाद फिर कुछ और पाने को शेष नहीं रह जाता। कैसे वह मंदिर मिल जायेगा जहां हम अपने पूरे स्वरूप को उपलब्ध हो सकेंगे, जो हम होने को पैदा हुए है, वह हो सकेंगे। कहां है रास्ता ? कौन सा है रास्ता ?

सबसे बड़ी कठिनाई जो है वह यह है कि जीवन आकाश की तरह है जमीन की तरह नहीं है। काश जीवन जमीन की तरह होता तो महावीर चलते हैं, बुद्ध चलते हैं, कृष्ण चलते हैं, क्राइस्ट चलते हैं, रास्ते बन गये होते, उनके पदचिन्ह बन गये होते। लाखों लोग चले हैं, और पहुंचे हैं, पगडंडिया बन गई होतीं और कोई कारण नहीं था कि हम पक्के रास्ते भी बना लेते उस मंदिर तक लेकिन यह नहीं हो सका क्योंकि जीवन आकाश की तरह है जिसमें पक्षी उड़ते हैं और उनके पद चिन्ह नहीं बनते। पक्षी उड़ जाता है पीछे कोई चिन्ह नहीं छूट जाते। पक्षी पहुंच जाते हैं रास्ता नहीं बन पाता और जब दूसरे पक्षी को उड़ना हो तो फिर नये सिरे से शुरुआत करनी होती है—बंधे हुए रास्ते से नहीं। आकाश फिर खाली का खाली रह जाता है। यह दुर्भाग्य भी है और सौभाग्य भी है और सौभाग्य भी इसलिये कि बंधा हुआ रास्ता नहीं है। सौभाग्य इसलिये कि अगर बंधा हुआ रास्ता होता तो उस मंदिर तक पहुंचने का सारा आनन्द नष्ट हो जाता। क्योंकि उस मंदिर तक पहुंचने का जो आनन्द है वह पहुंचने में कम पहुंचने की यात्रा में ज्यादा। उस मंदिर का जो सौन्दर्य है वह उस मंदिर तक पहुंचने की खोज से ही पैदा होता है। उस सत्य की जो उपलब्धि है वह उस सत्य को जन्म देने की जो प्रसव पीड़ा है उसमें ही मिलती है। मेरी दृष्टि में तो दुर्भाग्य ही होता अगर रास्ता बन जाता, क्योंकि बंधे हुए रास्ते रेल की पटरियों की तरह हमें भी वहां पहुंचा देते, भगवान के द्वार तक, सत्य तक, सौन्दर्य तक, प्रेम तक। लेकिन तब वह मंदिर बासा और उधार होता। उसकी ताजगी और नयापन खो गया होता। परमात्मा की बड़ी कृपा है कि जीवन

जमीन की तरह नहीं आकाश की तरह है, जहां कोई पदचिन्ह नहीं बनते । लेकिन आदमी मार्ग खोजना चाहता है । कैसे पहुंचे ? और जैसे ही कोई सोचना शुरू करता है उसे दिखाई पड़ने लगता है कि जीवन अर्थहीन है, कोई अर्थ नहीं मालूम पड़ता । सब तरफ अंधेरा है, कोई प्रकाश नहीं दिखाई पड़ता । क्यों जी रहे हैं ? क्यों पैदा हुए हैं ? इसके पीछे भी कोई कारण दिखायी नहीं पड़ता । सब meaningless, absurd--न कोई अर्थ, न कोई संगति । जो भी सोचता है उसे ऐसा दिखायी पड़ना शुरू होता है ।

स्वाभाविक ही वह पूंछे कि रास्ता है कोई ? तीन रास्तों के संघर्ष में हजारों साल से आदमी ने विचार किया है। उन तीन रास्तों में दुनिया के सभी रास्ते समाहित हो जाते हैं। उन तीन रास्तों के नाम हमने भी सुन रखे हैं। तीन ही रास्ते क्यों इतने महत्वपूर्ण हो गये ? रास्ते होने के कारण ? नहीं, आदमी का मन तीन परतों में बँटा है इसलिए । आदमी के मन के तीन केन्द्र, तीन परते हैं, । अगर आदमी के मन में हम प्रवेश करें तो उसकी पहली परिधि कर्म की है, बिना काम के रहना बहुत मुश्किल है । मन बिना काम के एक क्षण भी नहीं जीना चाहता । इसलिये अगर कोई काम न हो तो आदमी बेकाम के काम खोज लेता है । कभी मैं देखता हूं सफर में मेरे साथ एक ही यात्री होता है । देखता हूं जिस अखबार को वह दो दफा पढ़ चुका उसने फिर तीसरी बार पढ़ना शुरू कर दिया । उस अखबार को वह दो बार पढ़ चुका है वह तीसरी बार उस अखबार को क्यों पढ़ता है ? मन बिना काम के एक क्षण नहीं जी सकता । यद्यपि हम सभी सोचते हैं कि काम से मुक्ति हो जाये तो कितना अच्छा है, लेकिन अगर काम से मुक्ति हो जाये तो हम जितनी परेशानी में पड़ेंगे उतनी परेशानी हमें काम में कभी नहीं थी । फिर निरव्यर्थ काम खोजने पड़ेंगे । आदमी ताश खेलेगा और अगर कोई दूसरा खेलने वाला न मिले तो आदमी अकेला भी ताश खेलता है--दोनों तरफ से चलता है । वह विरोधी की तरफ से भी पत्ते चलता है और अपनी तरफ से भी पत्ते चलता है, उस विरोधी की तरफ से जो है ही नहीं । कोई काम चाहिये, मन की पहली बाहर की जो परिधि है वह कर्म की मांग करती है कि काम दो । इसलिये एक रास्ता कर्म का रास्ता बन गया है वह मन की मांग है तो हमने ritual पैदा किया है, कर्मकांड पैदा किया है, पूजा है, तपस्या है, आसन है, योग है । हमने पचीस तरह के काम विकसित किये--परमात्मा तक पहुंचने के लिये । लेकिन कोई काम परमात्मा तक नहीं पहुंचा सकता, क्योंकि सब काम मनकी आकांक्षाओं की तृप्ति करते हैं । और मन के ऊपर उठे बिना किसी सत्य तक नहीं पहुंच सकते, न प्रभु तक पहुंच सकते, मन कहता है काम चाहिये ।

हमने कहानियाँ सुनी हैं कि अगर कोई भूत--प्रेत की दोस्ती बना ले तो वह काम माँगता है, उसे काम चाहिये । मैंने सुना है कि एक आदमी ने एक प्रेत को जगा दिया । उस प्रेत ने जगते समय उससे एक शर्त कर ली थी मुझे काम चाहिये—मैं बिना काम के नहीं रह सकूंगा । अगर कहीं प्रेत होते हैं तो जरूर उसने यह शर्त की होगी क्योंकि प्रेत के पास शरीर नहीं रह जाता सिर्फ मन ही रह जाता है । उसे काम चाहिये, विश्राम की उसे जरूरत ही नहीं रही । शरीर को विश्राम भी चाहिये, मन को विश्राम की जरूरत ही नहीं । इसलिये जब शरीर भी सो जाता है रात, तब भी मन सपनों में काम करते रहते हैं । सपने मन के काम की दुनिया हैं । जब शरीर भी थक के गिर पड़ा है तब भी मन थकता नहीं वह तो सपने देखना शुरू कर देता है, और जो काम दिन में न किये हो उनको रात सपने में कर लेता है । आदमी के रात के सपने देखके हम बता सकते हैं कि इस आदमी ने दिन में किन किन कामों से अपने को रोका । अगर किसी ने उपवास किया है तो उसके सपने से पता चल जायेगा क्योंकि रात वह भोजन करेगा । अगर किसी ने संयम सोचा है तो रात वह भोग करेगा और किसी ने अगर दिन में क्रोध रोका है तो रात वह क्रोध कर लेगा । जब शरीर विश्राम करेगा तब मन ने जो-जो मांगे दिन में की थीं और किन्हीं कारणों से रुक गई थीं उन्हें हम पूरा करते हैं । प्रेत के पास सिर्फ मन ही है उसने अगर माँग

की हो तो आश्चर्य नहीं, उसने कहा मुझे काम चाहिये। जिस आदमी ने जगाया था प्रेत को, उसने कहा-काम के लिये ही तो हम तुम्हें जगा रहे हैं, काम हम बहुत देंगे। लेकिन काम बहुत जल्दी चुक गये क्योंकि प्रेत क्षण भर में काम कर लाया। उसने फिर आकर मांग की कि काम दो। सांझ होते होते वह आदमी घबड़ा गया क्योंकि कोई काम बचा नहीं। हम भी घबड़ा जायेंगे अगर कोई काम न बचे। प्रेत भी मुश्किल में पड़ गया उसने कहा-मुझे जगा लिया। मैं सोता था तो ठीक था अब जाग के मुझे काम चाहिये। अब वह आदमी घबड़ा गया क्योंकि उसके पास काम न था उसने कहा बाहर गाँव में एक फकीर है मैं उससे पूछ आता हूं। जब भी मैं मुश्किल में पड़ जाता हूं उसने मेरी सहायता की है। आज एक नयी तरह की मुश्किल पड़ गई। अब तक हमेशा यही मुश्किल थी कि कोई काम कैसे हल हो ? आज यह एक मुसीबत हो गई--बेकाम कैसे रहा जाय।

आज अमेरिका उस हालत में पहुंच रहा है, technology ने एक प्रेत जगा लिया है जो आदमी को काम से मुक्त कर दे। अमेरिका का विचारक आज एक ही परेशानी में है वह यह कि बीस पच्चीस सॉल में technology हर आदमी को काम से छुटकारा दिला देगी, फिर क्या होगा ? आदमी कहेगा काम दो—काम हमारे पास नहीं होगा। हम कहेंगे भोजन लो, कपड़े लो, मकान लो लेकिन काम मत मांगो। जो आदमी राजी हो जायेगा कि हम काम नहीं करेंगे, उसको ज्यादा तनखा मिल सकेगी। पच्चीस साल बाद बजाय उस आदमी को जो कहेगा हमको तो काम चाहिये ही, उसको कम तनखा देनी पड़ेगी, क्योंकि वह काम भी मांगता है और तनखा भी मांगता है। दोनों बातें नहीं दी जा सकतीं। वही मुसीबत उस आदमी के सामने खड़ी हो गई तो वह फकीर के पास गया। उसने फकीर से पूछा कि मैं बहुत मुश्किल में पड़ गया हूं। एक प्रेत को सुबह मैंने जगा दिया, सांझ होते-होते सारे काम चुक गये हैं। अब काम मेरे पास नहीं है और वह मेरी जान लिये लेता है। उस फकीर ने कहा तुम एक काम करो, वह सामने एक बर्तन पड़ा है वह ले जाओ। उसने कहा इसे क्या करूंगा ? उसने कहा उस प्रेत को कहना उसको भरते रहो। उस बर्तन में पेंदी नहीं थी—वह Bottomless था। उसने कहा इस बर्तन में तो पेंदी नहीं है वो बिचारा भरेगा कैसे ? तो उस फकीर ने कहा अगर वह भर लेगा तो फिर मुसीबत शुरू हो जायेगी। तुम उसे भरने दो ये बर्तन—कभी करेगा नहीं और यह भरता रहेगा, उसे काम मिलता रहेगा। वह उस बर्तन को ले आया और प्रेत को दे दिया तबसे प्रेत ने दुबारा लौट के उससे नहीं कहा, काम चाहिये क्योंकि वह काम अभी पूरा नहीं किया। जब आदमी के पास कोई काम नहीं रह जाता तो वह इस तरह के काम चुन लेता है जो कभी पूरे नहीं होते। वह इस तरह के बर्तन भरने लगता है जो कभी भरते नहीं। इसलिये जैसे ही किसी आदमी के जीवन की सामान्य जरूरतें पूरी हो जायें उसके सामने सबसे बड़ा सवाल होता है वह कोई ऐसा बर्तन ले आये जो कभी पूरा न हो। वह पदों की दौड़ में लग जाये वो कभी पूरी न हो। वह किसी भी बड़े पद पर पहुंच जाये आगे और पद होगा। वह बर्तन के नीचे पेंदी नहीं है। वह धन की दौड़ में लग जायेगा, वो कितना ही धन कमा ले तब भी गरीब रहेगा क्योंकि आगे और धन कमाने को सदा शेष है।

एन्ड्रू कार्नेगी अमेरिका का एक अरबपति मरा। मरते वक्त उसके पास दस अरब रुपये थे लेकिन मरते वक्त बहुत उदास था तो उसके मित्र ने उससे पूछा कि तुम्हें उदास नहीं होना चाहिए तुमने तो जीवन में जो चाहा था वह पा लिया, शायद पृथ्वी के तुम सबसे बड़े अमीर आदमी हो, दस अरब रुपये तुम छोड़के जा रहे हो। एन्ड्रू कार्नेगी ने कहा—मत करो ये बातें, मेरे चित्त को दुखाओ मत, सिर्फ दस अरब से मन बड़ा दुखता है। मेरे इरादे सौ अरब रुपये छोड़ने के थे, यह तो मौत करीब आ गई। मैं एक गरीब आदमी मर रहा हूँ क्योंकि सौ की मेरी इच्छा थी और दस ही कुल कमा पाया। नब्बे अरब रुपये मेरे पास नहीं हैं जो होने चाहिये थे। और ध्यान रहे उसको अगर सौ अरब भी मिल जाता तो

भी फर्क न होता क्योंकि संख्या चुक नहीं जाती सौ पर, संख्या आगे बढ़ जाती, हजार अरब हो जाते, लाख अरब हो जाते कितने ही मिल जाते तो भी कोई फर्क नहीं पड़ता। धन, पद और यश की दौड़ आदमी खोज लेता है, जैसी उसकी काम की दुनिया पूरी हुई फिर वह ऐसे काम चुन लेता है जिसमें पेंदी नहीं होती। फिर वह भरता चला जाता है, फिर वह छोटे मिनिस्टर से बड़ा मिनिस्टर होता है, फिर वह बड़े मिनिस्टर से दिल्ली की तरफ जाता है, और फिर वह और बड़ा होता जाता है। वह अंतहीन है उस दौड़ का कोई अंत नहीं है। ये सारी दौड़ आदमी चुनता इसलिये है कि उसके मन को काम चाहिये। मन कहता है काम न मिलेगा तो हम मर जायेंगे और जिसे सत्य को खोजना हो उसे सत्य खोजने के लिये मन का मर जाना जरूरी है कि मन मर ही जायेगा क्योंकि जो भर सकता है वह सत्य नहीं हो सकता। मन के भर जाने के बाद भी जो शेष रह जाता है जो नहीं भरता है वह ही सत्य है। अमृत भी है हमारे भीतर, लेकिन मरण से भरा हुआ मन अपने को बचाने के लिए काम की माँग करता रहता है, तो एक तो मार्ग कर्म का खोजा है लोगों ने। धार्मिक कर्म कहेंगे उसे, Ritual है क्रिया कांड है। एक आदमी हवन कर रहा है एक आदमी माला फेर रहा है, एक आदमी भगवान के सामने आरती घुमा रहा है। ये पुराना Ritual था, पुराना क्रियाकांड था, यज्ञ थे, हवन थे, पूजा थी, पाठ था। ये क्रियाएं थीं जिनसे आदमी सोचता था कि सत्य को पा लेंगे, आनंद को पा लेंगे, लेकिन क्रियाओं से कभी सत्य नहीं पाया जा सकता। इन क्रियाओं से सिर्फ मन ही तृप्त होता है और कुछ तृप्त नहीं होता। ये पुराने कर्म की दुनिया थी लेकिन पुराने कर्म से आदमी ऊब जाता है, सब काम उबा देते हैं। फिर वह नये कर्म खोजता है। सेवा नया कर्म है नया Ritual है। एक आदमी कहता है गरीब की सेवा करने से सत्य मिल जायेगा। एक आदमी कहता है कोढ़ी के हाथ पैर दबाने से सत्य मिल जायेगा। एक आदमी कहता है भूखे को रोटी देने से सत्य मिल जायेगा। नहीं, भूखे को रोटी देना बहुत अच्छा है, कोढ़ी के पैर दबाना भी बहुत अच्छा है, गरीब की सेवा करना भी बहुत अच्छा है लेकिन सत्य नहीं मिल जायेगा। कोढ़ी को ही नहीं मिल गया तो उसके पैर दबाने से आपको कैसे मिल जायेगा? नहीं तो कोढ़ी को तो मिल ही गया होता। उसने आपसे बड़ा काम किया है, पुराने Ritual से बेहतर है, पुराने क्रिया कांड से बेहतर है। वह बिलकुल व्यर्थ था। एक पत्थर की मूर्ति के सामने, एक आदमी थाली घुमा रहा है वह बिलकुल पागलपन की बात थी। अब कम से कम थाली एक भूखे के सामने आप ले गये हैं इसमें कुछ समझदारी है, लेकिन सत्य इससे नहीं मिल जायेगा। क्योंकि मन काम की मांग कर रहा है वह इससे भी अपनी तृप्ति पा लेगा। इसलिये जितने लोग सेवा करते दिखाई पड़ते हैं अगर इनको सेवा से रोका जाय तो ये पागल हो जायें। कोई पद यात्रा कर रहा है उसे अगर रोक लो तो वह मुश्किल में पड़ जाये। पद यात्रा करके वह जो काम करने का पागलपन उसके सिर पर सवार है उसको निकाले चला जा रहा है। अगर दुनिया में कोई गरीब न हो, दुनिया में अगर कोई कोढ़ी न हो तो कुछ लोग बड़ी मुश्किल में पड़ जायें, क्योंकि वह किसकी सेवा करे? उनको बहुत मुश्किल हो जाये, उनको बहुत कठिनाई हो जाये।

मैंने सुना है एक आदमी अपने बेटे को समझा रहा था कि भगवान ने तुम्हें इसलिये बनाया है कि तुम सबकी सेवा करो। उस बेटे ने कहा यह मैं समझ गया लेकिन भगवान ने दूसरों को किसलिये बनाया है? मेरी सेवा के लिये? या बस इसलिये बनाया है कि दूसरों की सेवा करें। उस बेटे ने बाप को मुश्किल में डाल दिया। जब तक बेटे सवाल नहीं करते तभी तक बाप मुश्किल से बाहर है, जब वह सवाल करने लगते हैं तब मुश्किल हो जाने वाली है। उस बेटे ने यह पूछा कि यह तो मैं समझ गया कि मुझे इसलिये बनाया कि मै दूसरे की सेवा करूं लेकिन दूसरों को किसलिये बनाया है? मेरी सेवा के लिये? और अगर सबको ही सेवा के लिये बनाया है तो सेवा किसकी की जाये? और अगर सेवा करना पुण्य है तो सेवा करवाना पाप हो जाये।

और जो पुन्य किसी के पाप करने पर निर्भर रहता है वह पुण्य कैसे हो सकता है ? पुराने क्रियाकांड तो गए । लेकिन कर्म को पकड़ को जो हमारी वृत्ति है, वह वृत्ति मन की एक बहुत गहरी जरूरत से पैदा होती है। इसलिये एक तरह के मार्ग हैं जो कर्म पर जोर देते हैं और हमारे बीच Extrovert बहिर्मुखी व्यक्तित्व है जो भीतर की तरफ नहीं देख सकते, बाहर की तरफ ही देख सकते हैं जिनकी जिंदगी बाहर की तरफ जाने में ही जी जा सकती है। उन सारे लोगों के लिये कर्म का रास्ता बड़ा ही Appealing बड़ा आकर्षक प्रतीत होता है। सेवा करने वाले लोग, हवन करने वाले लोग, यज्ञ करने वाले लोग Extrovert हैं बहिर्मुखी है। वह भीतर नहीं देख सकते। उनकी आँख बाहर की तरफ ही देख सकती है। उन्हें बाहर की तरफ कुछ चाहिये । बाहर कुछ होता रहे तो ठीक है। अगर बाहर कुछ न हो तो बहुत मुश्किल में पड़ जायें क्योंकि भीतर जाने की उनकी वृत्ति नहीं है जो बहिर्मुखी है उन्होंने कर्मयोग जैसी धारणाओं को विकसित किया है।

दूसरे, मन की जो भीतर की-कर्म के बाद की जो पर्त है वह विचार की पर्त है। आदमी पूरे समय विचार कर रहा है, सोच रहा है चिंतन कर रहा है। वह भी मनकी एक जरूरत है। मन बिना सोचे भी जिंदा नहीं रह सकता है। विचार चाहिए । ज्ञान-योग या ज्ञान का जो मार्ग है वह मन की दूसरी जरूरत की पूर्ति है। शास्त्र है, वेद है, कुरान है, बाइबल है, गुरु है, ज्ञानी है। उन सबसे इकट्ठा करो विचारों को और उनकी जुगाली करते रहो। कुछ न कुछ सोचते ही रहो, खाली मत हो जाना क्योंकि मन अगर एक क्षण भी सोचने से मुक्त हो जाये, एक क्षण भी सोचना बंद हो जाये तो वह अंतराल पैदा हो जाता है जहाँ से मन के बाहर निकलने का है। इसलिए मन एक क्षण भी सोचने के बाहर नहीं जाने देता । अगर आप यह भी कहें कि मुझे सोचने से बाहर जाना है तो वह कहेगा—नहीं, इस संबंध में सोचो कि सोचने से बाहर कैसे जाया जा सकता है लेकिन सोचते रहो। निर्विचार होना है तो चलो निर्विचार के संबंध में विचार करें। लेकिन विचार जारी रहे, विचार को बंद नहीं करना। अगर धन के संबंध में सोच से ऊब गये हो तो धर्म के संबंध में सोचो। अगर पृथ्वी अब आकर्षक नहीं मालूम होती तो स्वर्ग के संबंध में सोचो, अगर आदमी का चेहरा अब बहुत सोचने जैसा मालूम नहीं पड़ता तो आने मनके चेहरे बनाओ। भगवान के, कृष्ण के, राम के, उनके संबंध मे सोचो लेकिन सोचना जारी रखो—सोचना मत छोड़ देना। मन कहता है, बिना सोचे रहा ही नहीं जा सकता। तो जो लोग कर्म से बचना चाहें उनके लिए मन सोचने का मार्ग देता है। कर्म करने वाले लोग बहुत सोचने वाले लोग नहीं होते। बहुत सोचने वाले लोग कर्म में जितनी हमारी उर्जा व्यय होती है वह सब सोचने में लगा देता है। इसलिये कर्म करने वाले लोग बहुत सोचने वाले लोग नहीं होते । विचारक अकसर कर्म की दुनिया का आदमी नहीं होता और कर्म की दुनिया के लोग अकसर विचारक नहीं होते, क्योंकि उर्जा हमारे पास सीमित है, Energy सीमित है। अगर वह कर्म में लग जाये तो वह विचार की तरफ प्रवाहित नहीं हो पाती, अगर विचार में प्रवाहित हो जाय तो कर्म की तरफ प्रवाहित नहीं हो पाती। लेकिन मन का काम पूरा हो जाता है, क्योंकि विचार भी बहुत सूक्ष्म अर्थों में कर्म का ही एक रूप है वह भी एक काम है। वह भी एक सूक्ष्म क्रिया है। आदमी धन के लिये सोच रहा है, मकान के लिये सोच रहा है, मित्रों के लिये सोच रहा है, संबंधियों के लिये सोच रहा है फिर इससे ऊब जाता है तो परमात्मा के लिये सोचता है। आत्मा के लिये सोचता है, मोक्ष के लिए सोचता है। सोचना जारी रहता है। और ध्यान रहे मनकी इस दूसरी जरूरत को पूरा करने के लिये ज्ञानयोग है। वह कोई मार्ग नहीं है सत्य का । मन का ही भोजन है वह, मन की ही तृप्ति का एक रास्ता है। उससे भी कभी कोई कहीं नहीं पहुंचा है। हां, मन लंबी यात्रा पर भटका देता है।

ये जो मार्ग पैदा हुए हैं ये मार्ग कोई सत्य तक पहुंचने से पैदा नहीं हुए हैं। ये हमारे मन की आकांक्षा

है जिनकी तृप्ति के लिए हमने ईजादें की हैं । न तो कर्म से कभी कोई पहुंचा है, न ज्ञान से कभी कोई पहुंचा है । लेकिन ज्ञान का काफी प्रभाव है, क्योंकि यह तो हमारी समझ में भी आ जाय, कि कर्म से कैसे पहुंचेंगे ? अगर एक आदमी माला फेर रहा है तो माला फेरने से कैसे पहुंच जायेंगे । कितना ही फेरे माला, माला फेरने से कैसे पहुंच जायेंगे ? और एक आदमी अगर पूजा का थाल लिये भगवान के सामने आरती कर रहा है तो वह कैसे पहुंचेगा ? यह हमारी समझ में भी आ जायेगा लेकिन यह हमारी समझ में और भी आना कठिन होता है कि विचार से भी नहीं पहुंचेगा । इसे थोड़ा सोच लेना जरूरी है । विचार कर क्या सकता है? जिसे हम नहीं जानते हैं, विचार उसके सम्बन्ध में सोच नहीं सकता । जिसे हम जानते ही हैं उसी के सम्बन्ध में सिर्फ सोच सकता है । विचार नये के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं सोच सकता । अज्ञात unkonwn के सम्बन्ध में विचार की कोई उड़ान नहीं है । आपने कभी कोई चीज सोची है जो आप जानते ही नहीं ? आप सोच ही नहीं सकते । शायद आप कहेंगे, हाँ मैं एक ऐसा घोड़ा सोच सकता हूं जो सोने का बना है जिसके पंख हैं और जो आकाश में उड़ता है, सोच सकते हैं लेकिन यह कोई नई बात न हुई सिर्फ पाँच–छः पुरानी बातों का जोड़ हुआ । आपने पंख से उड़ते हुए पक्षी देखे हैं, सोना देखा है, घोड़ा देखा है । तीनों को जोड़ सकते हैं, सोने का घोड़ा बना सकते हैं—विचार से । पंख लगा सकते, उड़ा सकते लेकिन ये तीन पुरानी बासी चीजों का जोड़ है । इसमें नया कुछ भी नहीं है, विचार नये को सोच ही नहीं सकता । विचार मात्र बासा होता है, उधार होता है । मौलिक विचार जैसी कोई चीज होती ही नहीं । कोई विचार मौलिक नहीं होता—हो ही नहीं सकता । यानि विचार का मौलिक होने का कोई उपाय ही नहीं है । विचार सदा बासा होता है, कहीं से लिया होता है । हां, दस-पाँच विचारों की तोड़ से आप एक नया संयोग बना सकते हैं । वह नया संयोग आपको सत्य तक ले जाने वाला नहीं । सत्य है अज्ञात, अनजान, अपरिचित उसे विचार से कैसे जान लेंगे ? जिसका मुझे पता ही नहीं उसको मैं सोचूंगा कैसे ? उसे सोचने का उपाय नहीं । सत्य को सोचा नहीं जा सकता । लेकिन लोग बैठे हैं आंखें बंद करके वह कहते हैं, हम सत्य का विचार करते हैं । विचार कर रहे होंगे, सत्य का नहीं हो सकता कोई विचार । जब सब विचार क्षीण हो जाते हैं तब जो शेष रह जाता है वह सत्य है । विचार की दीवार भी सत्य से नहीं जुड़ने देती । चाहे वह विचार हमने अपने जीवन के अनुभव से ही इकट्ठे किये हों लेकिन विचार की जो पर्त है, वह भी हमारे और सत्य के बीच बुनियादी बाधा है । लेकिन ज्ञानी कर्म की निन्दा करेंगे । वे कहेंगे क्या होगा कर्म से ? सोचो, सोचना भी कर्म का सूक्ष्म रूप है । असल में कर्म में और सोचने में फर्क क्या है ? कर्म में शरीर भागीदार होता है, सोचने में सिर्फ मन भागीदार होता है । सोचना मन का कर्म है । एक काम में अगर आप शरीर का उपयोग करें तो वह कर्म हो जायेगा और अगर सिर्फ मन का उपयोग करें तो वह सोचना और विचारना हो जायेगा । मैं भोजन करूं और शरीर का उपयोग करूं तो कर्म हो जायेगा, और मैं आंख बंद करके भोजन का विचार करूं तो विचार हो जायेगा । वह भी कर्म है सिर्फ मानसिक कर्म । जिसे हम ज्ञानयोग कहते हैं वह कहाँ ले जा सकता है कहीं भी नहीं ले जा सकता । वह मनकी एक गहरी पर्त को तृप्त कर देता है । इसलिये दूसरा रास्ता ज्ञानयोग का रहा लेकिन वह भी रास्ता नहीं ।

तीसरा रास्ता है भाव का-वह मन की केन्द्रीय ताकत है Emotional वह सबसे गहरा है । कर्म सबसे ऊपर है, उसके बाद विचार है, उसके बाद भाव है । भाव अति सूक्ष्म है । भाव को पहचानना ही मुश्किल होता है । जब तक वह विचार न बन जाय हम उसको पहचान भी नहीं पाते और जब तक वह कर्म न बन जाय तब तक दूसरे नहीं पहचान पाते । भाव जब विचार बनता है हम पहचान पाते हैं और भाव जब कर्म बन जाता है तब दूसरे पहचान पाते हैं । भाव अति सूक्ष्म मन है । तो कुछ लोग कहते हैं ये विचार से नहीं होगा, तर्क से नहीं होगा, सोचने से नहीं होगा वह भावना से होगा, भक्ति से होगा । कहते हैं सोचना भी छोड़ो, कर्म भी

छोड़ो, भाव में लीन हो जाओ। लेकिन भाव भी मन की ही गहरी पर्त है चाहे वह भाव प्रेम का हो, चाहे वह भाव क्रोध का हो, चाहे वह भाव मित्रता का हो, चाहे शत्रुता का हो, चाहे वह भाव समर्पण का हो, भाव ही मेरे मनकी भाव दशा है। मेरा ही मन भाव कर रहा है। यह जो भाव है इससे भक्ति का जन्म हुआ है कि हम भाव करें। भाव करके हम Illusions पैदा कर सकते है, भाव करके हम बड़े भ्रम पैदाकर सकते हैं, भाव से हम जो चाहें वह सपना भीतर सच मालूम हो सकता है। भाव की बड़ी शक्ति है अगर कोई मनुष्य भाव करे तो जो भी भाव करेगा वही हो जायेगा। हिप्नोसीस में—सम्मोहन में यही हो रहा है। अगर एक आदमी को सम्मोहित करके कहा गया है कि अब तुम आदमी नहीं रहे, तुम कुत्ते हो गये हो। संमोहन की अवस्था में उसका कर्म भी बंद हो गया, बिचार भी बंद हो गया है, सिर्फ भाव रह गया है। विचार थोड़ी बहुत बाधा डाल सकता है। विचार कह सकता है कि कौन कहता है कि मैं कुत्ता हो गया हूं? मैं आदमी हूं लेकिन विचार भी सुला दिया गया है। अब सिर्फ भाव रह गया है भाव बिलकुल अंधा है। अगर एक आदमी के मन में सिर्फ भाव रह गया है और उसे यह सुझाव दिया जाय कि तुम कुत्ते हो और फिर उस आदमी को कहा जाय—बोलो, तो वह बोलेगा नहीं—भोंकना शुरू कर देगा। क्योंकि उसने पकड़ लिया कि वह कुत्ता हो गया है।

अभी एक युनिवर्सिटी में अमेरिका में एक बहुत अद्भुत घटना घट गई और उस घटना के बाद अमेरिका में संमोहन के ऊपर कानूनी पाबंदी लगानी पड़ी। चार विद्यार्थी एक होस्टल में हिप्नोटोजम पर एक किताब पढ़ रहे थे। किताब में उन्होंने पढ़ा कि जिस तरह का भाव किया जाय वही हो सकता है तो उन चार में से एक ने तय किया कि यह असंभव है यह हो नहीं सकता। फिर भी प्रयोग करके देखा जाय। एक युवक को उन्होंने कमरे में लिटा के, दरवाजे बंद करके, तीनों ने उसे सुझाव देने, सजेशन देने शुरू किये कि तुम बेहोश हो गये हो, तुम बेहोश हो गये हो। वे आधे घंटे तक उसको सुझाव देते रहे, धीरे धीरे उन्होंने देखा कि वह युवक बेहोश हो गया। मजाक में एकने उनमें से कहा—ठीक हुआ, बेहोशी तो आ गई, एक ने मजाक में उससे कहा कि तुम मर गये हो। वह युवक वापिस नहीं लौटा, उसकी सांस बंद हो गई। फिर मुकदमा चला लेकिन अनजाने में अपराध हो गया था। उनमें से कोई भी उसे मारना नहीं चाहता था। लेकिन अनजाने में अपराध हो गया था। अगर पूरा मन जोर से उस बात को पकड़ ले कि मैं मर गया हूं तो इस दुनिया में कोई ताकत नहीं बचा सकती। भाव अगर इतना तीव्र हो जाय तो शरीर से तत्काल संबंध छूट जाये। भाव की बड़ी शक्ति है लेकिन भाव मन की शक्ति है तो अगर भाव के हम प्रयोग करना चाहें तो बहुत प्रयोग कर सकते हैं।

क्राइस्ट का भक्त क्राइस्ट को देख सकता है। यूरोप में ईसाई फकीर हैं, आज भी जिंदा हैं, जीसस को सूली लगी थी तो हाथ में खीले ठोके गये थे और शुक्रवार के दिन ही ठोके गये थे। शुक्रवार के दिन आज भी यूरोप में ऐसे फकीर हैं जो ऐसे हाथ फैलाके बैठे रहते हैं। हजारों लोग देखने इकट्ठे होते हैं। जिस समय खीले ठोके गये थे जीसस के हाथ में, उस समय उनके हाथ में अपने आप छेद हो जाता, खून बहना शुरु हो जाता। वे इतना तादात्म्य कर लेते हैं भाव में, जीसस के साथ एक हो जाते और तब वे ऐसा नहीं सोचते कि जीसस को सूली लगी, तब ऐसा सोचते हैं कि मुझे सूली लगी और मैं रहा मरियम का बेटा जीसस। मेरे हाथ में खीले ठोक दिये गये और अगर पूरे भाव से यह बात सोचली जाय तो हाथ में खीले ठुक गये। लोग अंगारे पर चल लेते, वह सिर्फ भाव की बात है अगर भाव ने पूरा पक्का तय कर लिया कि आग नहीं लगेगा तो बहुत कठिन है आग का लग जाना। भाव अगर तीव्रता में कुछ बात ग्रहण कर ले तो वह संभव है; लेकिन वह हमारा ही पैदा किया हुआ, हमारे ही मन का प्रोजेकशन, वह हमने ही पैदा किया हुआ है। कृष्ण के दर्शन हो सकते हैं बांसुरी बजाते कृष्ण के साथ खेल भी हो सकता है, लीला भी हो सकती है। नहीं, लेकिन वे कृष्ण हमारे ही मन के प्रतिबिंब हैं, हमारे ही भाव

का। इसलिये भक्त जो है, भक्ति पर चलने वाला जो आदमी है उस मार्ग को पकड़ने में जो लगा है वह कहेगा संदेह मत करना। क्योंकि संदेह किया तो भाव पूरा नहीं हो सकेगा। वह कहेगा विचार मत करना क्योंकि विचार अगर किया तो विरोधी विचार भी हो सकता है। वह कहेगा अपने को बुरी तरह समर्पण कर दो भगवान के लिये, और भगवान कौन? वह भी मेरे मन का भाव है। भगवान का ही पता होता तब तो ठीक था उसका भी तो पता नहीं। अपने ही मन के एक भाव के प्रति पूरा समर्पण कर दो। फिर जैसी हमारी कल्पना होगी वैसा होना शुरु हो जायेगा। तुलसी ने कहा है कि जिसने जैसी मूर्ति की कल्पना की वैसे ही उसको दर्शन मिले। उसको दर्शन नहीं मिले, जिसने उसकी जैसी ही कल्पना की, अपनी ही कल्पना के दर्शन किये। हम अपनी ही कल्पना के दर्शन कर सकते हैं लेकिन कल्पना का दर्शन सत्य तक ले जाने वाला नहीं। इसलिये जो जितनी कल्पना में प्रगाढ़ होगा उतना भक्ति के रास्ते पर आसानी हो सकती है। पुरुष के बजाय स्त्री को ज्यादा आसानी हो सकती है इसलिये मंदिरो में, भजन कीर्तन में पुरुष के बजाय स्त्री की भीड़ भाड़ है। उसका कारण है, उसके पास भाव की शक्ति ज्यादा तीव्र है। इसलिये आज के बजाय दो हजार साल पहले भक्ति ज्यादा आसान थी क्योंकि भाव ज्यादा सुलभ था और दस हजार साल पहले और आसान थी। आज से दस हजार साल पहले देवी देवताओं को दूर नहीं रहना पड़ता था, वहीं जमीन पर रहे आते थे अब उनको बहुत दूर रहना पड़ता है क्योंकि आदमी बहुत सोच विचार करने लगा है और उनके और आदमी के बीच फासला हो गया है। देवी-देवता उतरके उनको चढ़ाया गया भोजन ग्रहण कर लेते थे, बातचीत भी होती थी, मेल जोल भी होता था, देवताओं से आदमियों की स्त्रीयों का प्रेम भी हो जाता था, बच्चे भी हो जाते थे, सब होता था। देवता बहुत पास थे क्योंकि आदमी के पास तर्क बहुत कम था, भाव बहुत था, भाव इतना था कि किसी भी तरह के देवता को निर्माण करने की क्षमता आदमी के पास थी। वह क्षमता चली गई, नुकसान नहीं हुआ क्योंकि वे देवता हमारी कल्पनाओं से ज्यादा न थे। वे देवता दिवा स्वप्न थे day dreams थे जो हमने ही देखे थे इसलिये वे खो गये, वे हमारे सपने थे हम जाग गये तो वो खो गये। आनेवाली दुनिया में भक्त की बचने की बहुत कम संभावना है क्योंकि भाव अब बिना तर्क के जिंदा नहीं रह पाता, तर्क बीच मे खड़ा हो जाता है तो भाव पूरा नहीं हो पाता, कल्पना टूट जाती है अगर इतना भी शक आ जाये कि कहीं यह मेरी कल्पना तो नहीं है। यह सब गया-बात खतम हो गयी। इतना शक भी आ जाने से भाव विदा हो जायेगा, भाव पूरी मांग करता है वह कहता है, पूरा दे दो अपने को, जरा भी इँच भर भी बचाना मत, पूरा अपने को दे देना लेकिन न तो भाव से, न ज्ञान से, न कर्म से आदमी मन के ऊपर नहीं उठ पाता है।

मन के ऊपर उठना हो तो तीनों बातों के ऊपर उठना पड़ता है। कर्म के ऊपर उठना पडता है, ज्ञान के ऊपर उठना पड़ता है, भाव के भी ऊपर उठना पड़ता है,। सब तरह की कल्पना भी छोड़ देनी पड़ती है, सब तरह के विचार भी छोड़ देना पड़ते हैं, सब तरह की आंतरिक क्रिया भी छोड़ देनी पड़ती है, इसका यह मतलब नहीं है कि आदमी कुछ न करेगा। नहीं करने से वह जानेगा की करने से सत्य नहीं मिलने वाला। करने से वस्तुयें मिल सकती हैं, अगर मैं चलूंगा तो राजकोट आ सकता हूं, मोक्ष नहीं पहुंच सकता। चलने से मोक्ष नहीं पहुंच सकता चलने से राजकोट पहुंच सकता हूं। इसका यह मतलब नहीं कि विचार करना छोड़ देना। विचार से बहुत कुछ जाना जा सकता है सारा विज्ञान विचार की खोज है लेकिन विज्ञान सत्य पर नहीं पहुंच पाता सदा Approximate पथ पर होता है। सदा करीब करीब सत्य पर होता है, सत्य पर कभी नहीं होता और ध्यान रहे करीब करीब सत्य का कोई मतलब ही नहीं होता। करीब करीब सत्य का कोई मतलब होता है? मैं आपको कहूं, मैं आपसे करीब करीब प्रेम करता हूं उसका कोई मतलब होता है; जब मैं कहूं मेरी बात करीब करीब सत्य है उसका मतलब है असत्य। करीब करीब Approximate Truth जैसे कोई चीज नहीं होती या तो सत्य

होता है या असत्य होता है। सत्य के कितने ही करीब हो तो भी असत्य ही होगा जब तक कि सत्य नहीं, इसलिए विज्ञान रोज करीब होता है। न्यूटन भी करीब करीब था, आईन्सटीन भी करीब करीब था आगे भी वैज्ञानिक करीब करीब ही होगा। कभी नहीं कह सकता कि यह रहा सत्य, वह उतना ही कहेगा कि जितना हम अभी जानते हैं उससे ऐसा मालूम पड़ता है कि यह सत्य है। कल और जानना बढ़ता है पता लगता है वह सत्य नहीं फिर और जानना बढ़ता है पता लगता है वह सत्य नहीं। आज तो विज्ञान की किताब लिखना भी मुश्किल हो गया क्योंकि बड़ी किताब लिखनी हो तो दो साल लग जाते हैं और दो साल में सब सत्य बदल जाते हैं। विज्ञान आगे पहुंच जाता है।

विज्ञान कभी भी सत्य के पास नहीं होता सदा आसपास होता है। आसपास का कोई मतलब नहीं है और कभी भी पास नहीं पहुंचता। लेकिन विचार का उपयोग है। विज्ञान की अपनी ताकत है, विज्ञान की अपनी सामर्थ्य है तो मैं यह कभी नहीं कहता कि विचार छोड़ देना है। मैं यह कहता हूं विचार विज्ञान के करीब करीब सत्यों तक ले जायेगा धर्म के सत्य तक नहीं और कर्म ? कर्म परमात्मा के मंदिर तक नहीं ले जायेगा। हां आदमी के मकानों तक जाना हो तो कर्म करना पड़ेगा और आदमी के मकानों तक जाने का अपना अर्थ है इसलिए कर्म छोड़ देने को नहीं कहता हूं, अगर पेट भरना है, रोटी कमानी है तो कर्म करना पड़ेगा लेकिन सत्य को अगर आत्मा में लाना है तो कर्म का कोई अर्थ नहीं। कर्म की अपनी उपादेयता है अपनी Utility है उसका अपना Dimension अपना आयाम है वहां कर्म का अर्थ, है इसलिए मैं नहीं कहता कि कर्म छोड़ के भाग जायें इतना ही कहता हूं कि कर्म से सत्य तक जाने की चेष्टा न करें। कर्म जहां ले जा सकता है वहां जाना हो जाये, विचार जहाँ ले जा सकता है वहां विचार ले जायगा। इसी उदाहरण के लिए अगर मैं आँख से सुनने की कोशिश करूं तो मुश्किल हो जायेगी। आंख सुनने का आर्गन नहीं और अगर मैं आपसे कहूं कि आँख से नहीं सुना जा सका तो इसका मतलब यह नहीं कि मैं कह रहा हूं कि आंख से देखा नहीं जा सकता। आंख से देखा जा सकता है। देखना हो तो आंख से देखना और सुनना हो तो आंख से मत सुनना, सुनना हो तो कान से सुनना पड़ेगा। हमारे पास मन के जो साधन हैं उनका उपयोग है, उनकी अपनी उपादेयता है। कर्म से मनुष्य बाहर के जगत में संबंधित होता है। बाहर के जगत में जो भी निर्माण है जो भी विध्वंस है वह सब कर्म है। विचार से मनुष्य जगत के जो नियम हैं, जगत के पीछे कार्य कारण की जो व्यवस्था है उसको समझने में वह सफल होता है और उसको समझ के उसके कर्म की शक्ति बढ़ जाती है और इसलिये बेकन ने कहा: knowledge is power, और यह ठीक कहा ज्ञान शक्ति है लेकिन सत्य नहीं। फिर शक्ति का क्या करियेगा ? फिर कर्म में लगाइयेगा क्योंकि शक्ति का केवल एक ही उपयोग है कि कर्म में लगे इसलिए जितना ज्ञान बढ़ता है उतना कर्म बढ़ता है। ज्ञान का करियेगा क्या ? ज्ञान का उपयोग है कि कर्म बढ़े, इसलिए पूरब में कर्म कम और पश्चिम में ज्यादा है। इतना ज्यादा है कि फुरसत ही नहीं खड़े होने की। ज्ञान बढ़ गया उसने कर्म को बढ़ा दिया। कर्म इतनी तेजी से घूम रहा है कि आदमी को ठहरने का भी मौका नहीं अगर वह एक जल प्रपात को भी देखने जाते हैं तो वह कार में से भागते हुए, खिड़की में से झांकके देख लेगा और निकल जाता है, अगर वह एक मुल्क को देखने जाता है तो हवाई जहाज के ऊपर से देख लेता कि मुल्क है और निकल जाता है। इतना भागा हुआ है क्योंकि ज्ञान ने शक्ति दे दी, शक्ति कर्म में रुपांतरित होगी नहीं तो शक्ति जान ले लेगी। शक्ति कहेगी काम चाहिये। शक्ति कहेगी मुझे काम दो नहीं तो मुश्किल हो जायेगी, तो शक्ति काम मांगती है कर्म में बदल जाती है।

भाव का अपना उपयोग है, भाव का जिंदगी में अपना अर्थ है अगर आप अपनी पत्नी से जुड़ते हैं तो भाव से जुड़ते हैं लेकिन परमात्मा से नहीं जुड़ सकते-भाव से, और अगर अपने बेटे से जुड़ते हैं तो भाव से जुड़ते हैं अगर अपने मित्र से जुड़ते हैं तो भाव से जुड़ते हैं, परमात्मा से नहीं। अगर एक कोढ़ी के पैर दबाते हैं,

गरीब की सेवा करते हैं तो भाव से करते हैं लेकिन उससे परमात्मा का कोई लेना देना नहीं । भाव का अपना अर्थ है और वह आदमी बहुत अधूरा है जिस में भाव न हो, वो आदमी भी बहुत अधूरा है जिसमें विचार न हो, वह आदमी भी बहुत अधूरा है जिसमें कर्म न हो। इन सबके अपने आयाम हैं लेकिन सत्य इनमें से किसी आयाम से उपलब्ध नहीं होता। भाव से भाव का जगत उपलब्ध होता है, विचार से विचार का, कर्म से कर्म का, और एक ऐसा भी जगत है जो इन तीनों के पार है Beyond है जो तीनों के आगे है। जो Transit करता है। जहां न भाव रहजाता है, न कर्म रह जाता है । जहां सिर्फ अस्तित्व रह जाता है।

अस्तित्व की तीन शाखायें है। अस्तित्व के बीज में तीन शाखायें निकली हैं—कर्म की, भाव की, विचार की लेकिन अगर इन शाखाओं पर हम भटकते रहे तो जो अस्तित्व की जड़ है उसका हमें पता न लगेगा। इन शाखाओं से उतर के जड़ पर आ जाना होगा। परमात्मा या सत्य अस्तित्व है, Existence है। वहां उतरने के लिये तीनों को छोड़ देना पड़ेगा। ये तीनों मार्ग नहीं हैं, ये तीनों भटकाव हैं । इन तीनों से हम भटक सकते हैं, पहुंच नहीं सकते हैं और अगर पहुंचना हो तो तीन से हार जाना पड़ेगा । आने वाले तीन दिनों में इस संबंध में बात करूंगा कि यह भटकाव क्यों है ? एक एक के संबंध में गहरी आपसे बात करना चाहूंगा कि भटकाव क्यों है ? यह भटकाव कैसे हो जाता है ? निश्चित ही आप पूछेंगे फिर मार्ग ? चौथा कोई मार्ग होगा ?

चौथा भी नहीं, पांचवा भी नहीं, असल में मार्ग है ही नहीं और जो आदमी सब मार्गों से नीचे उतर जाता है वह वहाँ पहुंच जाता है, जहाँ पहुंचना है।

कोई मार्ग वहाँ नहीं ले जा सकता, उसके कारण हैं। कुछ थोड़ी सी बातें कहूं। पहली तो बात अगर वह हमसे दूर होता तो हम किसी रास्ते से उस तक पहुंच जाते लेकिन वह हमसे दूर नहीं इसलिए सब रास्ते हमें दूर ले जायेंगे; अगर मुझे आपके पास पहुंचना हो तो रास्ते चाहिए लेकिन अगर मुझे अपने ही पास पहुंचना हो तो रास्ता कैसे हो सकता है ? और अगर मैंने अपने ही पास पहुंचने के लिए कोई रास्ता चुन लिया तो मैं भटका, क्योंकि मेरे पास पहुंचने के लिए रास्ता कैसे होगा ? मैं अपने पास हूं ही। इसलिए जबतक मैं रास्तों पर रहूंगा तबतक मैं अपने से भी दूर रहूंगा। जिस दिन मैं रास्ते से उतर जाऊंगा उस दिन मैं पाऊंगा कि मैं तो यहीं था ही। बुद्ध को जिस दिन बोध हुआ लोगों ने उनसे पूछा आप पहुंच गये ? पा लिया ? बुद्ध ने कहा, अब मत पूछो ऐसी बात क्योंकि अब कैसे कहूं कि पा लिया ? क्योंकि जिसे पाया ही हुआ था आज उसे पहचाना, पा नहीं लिया । किस रास्ते से पहुंचे ? लोगों ने पूछा, बुद्ध ने कहा कि कोई रास्ते से नहीं पहुंच सका क्योंकि सब रास्ते वहाँ पहुंचाते हैं जहाँ मैं नहीं था और यहाँ मुझे वहाँ पहुंचना था जहाँ मैं था ही। रास्ते वहाँ पहुंचा सकते हैं जहाँ मैं नहीं हूं, अगर मैं वहाँ हूं ही तो रास्ते कि क्या जरूरत है ? कोई रास्ता नही पहुंचाने का हम वहां हैं।

जैसे मैं राजकोट में सो जाऊं और सपना देखूं कि कलकत्ता में हूं और सपने में परेशान होने लगूं कि मुझे सुबह तो राजकोट पहुंचना है। बड़ी मुश्किल हो गई अब मैं कैसे वापिस लौटूं ? रास्ता कहाँ है ? लोगों से पूछने लगूं रास्ता बताओ कैसे जाऊँ ? Train से जाऊं Plane से जाऊं, बैलगाड़ी पकड़ूं, पैदल यात्रा करूं, क्या करूं ? मुझे राजकोट पहुंचना है, और अगर कोई मुझे रास्ता बता दे और मैं उस रास्ते चल पड़ूं तो क्या आप सोचते है मैं राजकोट पहुंच जाऊँगा ? मैं किसी भी रास्ते से चलूं और किसी भी वाहन का उपयोग करूं मैं राजकोट नहीं पहुंचने वाला क्योंकि मैं राजकोट हूं में हा। राजकोट कैसे पहुंचूंगा सुबह जब मेरी नींद खुले, जब मैं नींद खुलते दे खूं, कोई मुझसे पूछे कि पहुंच गये राजकोट ? तो कहना मुश्किल है कि पहुंच गया। था ही, आश्चर्य तो यह है कि होते हुए कैसे भटक गया था ? कहां भटक गया था ? कैसे मुझे यह ख्याल आ गया था कि मैं राजकोट से दूर कलकत्ता

चला गया ? परमात्मा वहां है जहां हम हैं, सत्य वहां है जहाँ हम सदा से हैं, सत्य वहां है जहां से अलग होने का कोई उपाय नहीं। लोग मुझसे पूछते है कि परमात्मा को कैसे खोजें ? तो मैं उनसे पूछता हूं कि तुमने खोया कैसे ? अगर तुम मुझे बता दो कि हमने इस भांति खोया तो मैं तुम्हें बता दूं कि इस भांति तुम उसे पा लोगे। वे कहते हैं नहीं, खोने का तो हमें कुछ पता नहीं, हमने खोया है यह हमें पता नहीं। मैंने कहा जिसे खोया ही नहीं है, जिसे खोने का भी पता नहीं उसे खोजने के पागलपन में क्यों पड़ते हो ? उसे खोजो ही मत। तुम सब खोज छोड़ दो।

लाओत्से ने दो-तीन छोटे छोटे वचन कहे उसका एक वचन है—Seek, and you will not find खोजो और तुम नहीं पा सकोगे। Do not seek, and find खोजो मत और पालो। बड़ी उल्टी बात कह रहा है लेकिन आज तक दुनिया में जो भी जानते हैं उन्होंने अनिवार्य रुप से उल्टी बात कही क्योंकि अगर सपने में आप मुझसे पूछें कि मैं राजकोट कैसे पहुंचूं ? तो मैं आपसे कहूंगा कि पहुंचना बंद कर दो, तुम राजकोट में हो। तुम पूछो ही मत रास्ता लेकिन आप कहें बिना गुरू के मैं कैसे पहुंचूंगा ? मुझे कोई गुरू बता दें,कोई रास्ता बता दें, कोई मार्ग बतायें जिससे मैं पहुंच जाऊँ और मैं कहूं कि तुम्हें कोई गुरू मिल गया तो तुम मुश्किल में पड़ जाओगे। सब गुरू मुश्किल में डाल देते हैं क्योंकि वह रास्ता बता देते हैं। वे कहते हैं यह रहा रास्ता ? ऐसे चले आओ। बस यहाँ से पहुंच जाओ। गुरू कहता है रास्ता है और जब कोई गुरू कहता है रास्ता है तब वह यह कहता है कि जिसे हम खोज रहे हैं वह खो दिया गया है। तब वह यह कहता है कि जहां हमें पहुंचना है वहाँ हम है नहीं, तब वह यह कहता है कि जहां हमें पहुँचना है वहां हम है नहीं। तब वह यह कहता है परमात्मा हमारे बीच फासला है—Distance है जिसको रास्ते से पूरा करना है। सब गुरु परमात्मा के दुश्मन हैं क्योंकि परमात्मा वहां है जहां हम हैं। परमात्मा हमारा स्वभाव है उसे हम खो नहीं सकते। उसे खोने का कोई रास्ता नहीं। हम कहीं भी भागें और दौड़ें और हम कहीं भी जायें वह हमारे साथ है। हम ही हैं वो, वही सांस ले रहा है, वही चेतन हुआ है, वही झांक रहा है आंखों से, वही बोल रहा है, वही सुन रहा है। उसे हम खो नहीं सकते। हम सो जायें तो वही सो रहा है, हम जाग जायें तो वही जाग रहा है। रास्ते की संभावना नहीं। जिस आदमी ने रास्ते बनाये हैं क्योंकि आदमी का मन—जिसने सारा भटकाव पैदा किया है, रास्ते भी बनवा देता है। आदमी का मन गुरु भी पैदा करवा देता है, आदमी का मन साधनायें भी करवा देता है, योग भी सधवा देता है। आदमी का मन सब कुछ करवा देता है। और आदमी का मन जब तक करवाता रहता है तब तक हम सपने में पड़े रहते हैं। मन जो है वह Dream है, मन जो है वह नींद है और नींद से जागना हो तो मन को भोजन देना बंद करना पड़े। अगर एक क्षण के लिए भी मन को भोजन मिलना बंद हो जाय, उसको Fuel मिलना बंद हो जाये—जैसे Car है आप Fuel दे रहे हैं, पेट्रोल दे रहे हैं—वह चल रही है, अगर एक मिनट भी Car को पेट्रोल न मिले तो Car रुक जायेगी। हां, Car बेचने वालों की बातों में पड़ जायें तो झंझट है। मैंने सुना है फोर्ड की एक दुकान पर एक Agent फोर्ड की गाड़ियां बेचता था। वह एक आदमी को गाड़ी में लेकर गया। कोई पांच-सात मील जाकर गाड़ी रुक गई तो उस आदमी ने पूछा अरे, नयी गाड़ी और ये क्या होता है ? Agent ने कहा, मालूम होता है मैं पेट्रोल डालना भूल गया, उसने देखा तो टांकी खाली है, बिना पेट्रोल डाले चला आया। उस आदमी ने कहा, तो बिना पेट्रोल डाले सात मील कैसे चल आये ? Agent ने कहा, इतना तो फोर्ड के नाम से चल जाते हैं। इतने के लिये पेट्रोल की कोई जरुरत नहीं। एजेन्टों की बात अलग है। जो Fuel के बिना चलाते हैं। वह फोर्ड के एजेन्ट हों, महावीर के एजेन्ट हों, कृष्ण के एजेन्ट हों उससे कोई फर्क नहीं पड़ता। दुकानदारों को, एजेन्टों की बात अलग है। वे चला सकते हैं। वे कहते है, राम नाम के सहारे

ही चल जाये, उसमें क्या है ? अगर रामनाम के सहारे चलती तो फोर्ड के नाम क्यों न चल सकती ? उसमें क्या बात है ? लेकिन एक मिनट पेट्रोल न हो तो गाड़ी वहीं खड़ी हो जायेगी। मन के लिए अगर एक मिनट भी Fuel न मिले तो मन टूट जाता है। एक सेकेन्ड को भी टूट जाये तो आपको झलक मिल जाती है। मन के बाहर को, एक मिनट के लिए नींद खुल जाय तो आप एक दूसरी दुनिया को जान लेते हैं, जिसको आपने नींद में नहीं जाना। मैं नहीं कहता कि आप अपने कर्म को छोड़के भाग जायें, मैं नहीं कहता कि आप विचार करना बन्द कर दें, मैं नहीं कहता कि आप भाव न करें मैं यह कहता हूँ कि आप इन तीनों की पूरी प्रक्रिया को समझ लें और चौबीस घंटे में क्षण भर के लिये भी अगर भाव कर्म और विचार, तीनों शांत हो जायें तो उस क्षण ही आप हैरान होंगे कि किसको खोज रहे हो ? जिसको मैं तलाश कर रहा हूं वह तलाश करने वाला ही हूं मैं कहां जाना चाहता हूं ? जहाँ मैं जाना चाहता हूं वहाँ मैं सदा से खड़ा हूं। एक क्षण को भी यह बोध हो जाये तब आप बिलकुल दूसरे आदमी हो गये इसके बाद आप कर्म करिये तो भी आप भीतर जानते हैं कि कुछ है जो नहीं कर रहा है, इसके बाद विचार करिये फिर भी आप जानते हैं कि कुछ है जो विचार के बाहर है, फिर आप प्रेम करिये और प्रेम के गहरे से गहरे क्षण में भी आप जानते हैं कि कोई है जो प्रेम करने को भी देख रहा है— साक्षी, फिर आप कुछ भी करिये, फिर इस जगत में आप एक अभिनेता से ज्यादा नहीं।

अभी एक नया हुआ अभिनेता मेरे पास आया था। उसने मुझे कहा कि मेरी डायरी मे कोई एक वाक्य लिख दें जो मुझे काम पड़ जाय, मैं नया नया आया हूं अभिनय की दुनिया में। दो फिल्मों मे काम कर रहा हूं लेकिन अभी मेरी कोई समझ नहीं है। आपके पास आया हूं, पता नहीं आप बुरा तो न मानेंगे ? क्योंकि मैं अभिनय के संबध मे सलाह लेने आया हूं। मैंने कहा बुरा मानने की जरूरत नहीं, मैं इसी के संबंध में सभी को सलाह दे रहा हूं। मैंने उसकी डायरी मे एक वाक्य लिख दिया वह मैं चाहूंगा आपकी डायरी में भी आप लिख लेंगे। मैंने उसको डायरी पर लिख दिया, "कि अगर ठीक अभिनेता होना हो तो अभिनय ऐसे करना जैसे कि यह जिंदगी है, और अगर ठीक जिंदगी पानी हो तो जीना ऐसे जैसे कि यह अभिनय है।" अगर अभिनेता इस तरह अभिनय कर पाये कि समझ ले कि यह जिंदगी है तो सफल हो जाता है और अगर कोई जिंदगी में इस तरह जो पाये देखले की यह अभिनय है तो जिंदगी के रहस्य को और सत्य को पा जाता है। मेरे लिये कोई मार्ग नहीं है क्योंकि मैं आपको सिर्फ सपने में देखता हूं, कहीं आप भटक नहीं गये हैं, सिर्फ सो गये हैं। इसलिये इन तीन दिनों में तीन मार्गों को तोड़ने की कोशिश करूंगा अगर ये तीनों टूट जायें तो आप बिना मार्ग के हो जायेंगे और धन्यभागी है वह जिसके पास कोई मार्ग नहीं क्योंकि तब उसको जाने का उपाय न रहा। तब वह खड़ा हो जायेगा, करेगा क्या ? रास्ता नहीं है, खड़ा ही होना पड़ेगा। जो खड़ा हो जाता है, ठहर जाता है, उसे वह दिखायी पड़ जाता है जो सदा से मौजूद है लेकिन हम दौड़ रहे हैं। हम भाग रहे हैं, हम नये रास्ते खोज रहे हैं। हम उसे देख ही नहीं पाते जो चारों तरफ मौजूद है क्योंकि उसे देखने के लिये क्षण भर तो कम से कम खड़ा होना जरूरी है।

अगर मार्ग की भाषा में ही पूछना हो तो मैं कहूंगा कि मार्गों को छोड़ देना मार्ग है, दौड़ बंद कर देना मार्ग है, रुक जाना मार्ग है, ठहर जाना मार्ग है, लेकिन निश्चित ही कोई मार्ग ठहरने के लिये नहीं कहता। मार्ग चलने के लिये होता है। मार्ग कहता है चलो, मार्ग कहता है दौड़ो, मार्ग कहता है तेजी से दौड़ो, मार्ग कहता है दूसरे मार्ग पर मत चले जाना नहीं तो भटक जाओगे, यह मैं मार्ग ठीक हूं। इसलिये सब मार्ग भटकाते हैं, सब पंथी भटकाते हैं। धर्म का कोई मार्ग नहीं है, कोई पंथ नहीं है। धर्म कहता है ठहरो, धर्म कहता है रुक जाओ, धर्म कहता है दौड़ो मत लेकिन 'दौड़ो मत' के लिये भी कोई मार्ग होता है ? ठहरने के लिये भी कोई मार्ग होता है ? रूक जाने का कोई मार्ग होता है ? नहीं, रुक जाने का तो मतलब यह होता है कि कोई मार्ग नहीं, और जब

आपको पता चलेगा कोई मार्ग नहीं तभी आप रुक सकते हैं, नहीं तो आप दौड़ते ही रहेंगे। एक मार्ग से ऊब जायेंगे तो दूसरा मार्ग पकड़ लेंगे। ईसाई हिन्दू हो जाता है, हिन्दू ईसाई हो रहे हैं। कोई कुरान से बदल के गीता पकड़ लेता है, गीता बदल के कोई कुरान पकड़ लेता है। कोई इस गुरू को छोड़ के उस गुरू के पास चला जाता है, इस गुरु से उस गुरु के पास चला जाता है। कब वह दिन आयेंगे जब आप कहेंगे कोई गुरु नहीं, कोई मार्ग नहीं, कोई शास्त्र नहीं। जिस दिन यह क्षण आ जायेगा उस दिन चलने का उपाय नहीं रहेगा, आप खड़े हो जायेंगे। जिस दिन आप, जिस क्षण आप खड़े हो जायेंगे, उसी क्षण क्रांति घटित हो जाती है—जिसका नाम धर्म है।

इन तीनों दिनों में तीनों मार्गों को तोड़ने की कोशिश करूंगा और आशा रखूंगा कि चार दिन के बाद जब मैं जाऊं तो आपके पास कोई मार्ग न हो, आप खड़े रह जायेंगे। ध्यान रहे कि परमात्मा आपको बहुत खोज रहे हैं लेकिन आप मिलते नहीं। आप इतने भागे रहते हैं कि जब तक वह पहुंचता है तब तक आप आगे निकल जाते हैं। जब तक वह पता लगाने पहुंचता है तब तक पाता है कि आप कहीं और किसी मार्ग पर चले गये हैं। आदमी को भगवान को नहीं खोजना है, भगवान निरंतर आदमी को खोज रहा है लेकिन आदमी घर पर मिल जाये कम से कम! वह जब भी आता है, दरवाजा खट-खटाता है, पता चलता हैं और कहीं हैं। जब तक वह वहाँ पहुंचता है तब पता चलता है वह और कहीं चले गये। इससे मुलाकात नहीं हो पाती।

एक छोटी सी कहानी और यह बात मैं पूरी करूंगा। मैंने सुना है एक बहुत शक्की आदमी था। वैसे तो सभी आदमी शक्की होते हैं। वह अपने घर में ताला भी लगाता था तो वह उसे चार बार हिलाके लौट लौट के देख जाता था। पता नहीं लगा कि नहीं लगा। कहीं भूल न हो गई हो। वह एक दिन सुबह सुबह एक दुकान पर बाल बनवाने गया। नाई ने उसके बाल बना दिये तो उसने रुपया दिया। नाई ने कहा आठ आने हुए लेकिन बाकी आठ आने मेरे पास अभी हैं नहीं कल ले जाना। उसने सोचा—कल पता नहीं यह आदमी बदल जाय और इतने जोर से बदलाहट हो रही है दुनिया में किसी का कोई भरोसा ही नहीं, कौन कब कहाँ हो? आज नाई है, कल ब्राह्मण हो जाये, कुछ पक्का पता नहीं। आज यह दूकान कर रहा है, कल दूकान बदल दे। कुछ पक्का है ही नहीं। चीजें इतनी जोर से बदल रही हैं कि किसी का कोई ठिकाना नहीं कि वह कल वहीं मिलेगा जहां कल सुबह आपने उसे पाया था। उसने सोचा कुछ पक्का कर लेना चाहिये, नहीं तो आदमी बदल दे। उसने सोचा बोर्ड ठीक से पढ़ लूं। उसने कहा बोर्ड का क्या भरोसा! दो मिनट में बदल जाता है। कांग्रेसी है कम्युनिस्ट हो जाता है, कम्युनिस्ट कांग्रेसी हो जाता है कुछ पक्का पता नहीं, यह बोर्ड का क्या है! उसने सोचा आदमी की शक्ल सूरत देखूं लेकिन शक्ल सूरत का क्या भरोसा है। गृहस्थ सन्यासी हो जाता है, सब शक्ल सूरत बदल देता है, रात भर में क्या क्षण भर में सब हो जाता है। उसने सोचा कुछ ऐसा इन्तजाम करूँ कि इसको पता ही न हो जिसको वह बदल सके। आखिर वह इन्तजाम करके चला गया। वह दूसरे दिन सुबह आया और उसने अंदर दूकान में जाकर गर्दन पकड़ ली। उसने कहा यही तो मैंने सोचा था। वह एक भैंस बैठी थी बाहर, उसको देख के चला गया उसने कहा इस भैंस का क्या पता होगा इसको की भैंस बाहर बैठी है। जहां कल भैंस होगी वहीं उसको पकड़ लेंगे अपन। भैंस रात भर में चली गई। भैंस का कोई भरोसा है क्या! आदमी का कोई भरोसा नहीं तो भैंस का भरोसा तो बहुत मुश्किल! भैंस चली गई। दूसरे दिन सुबह वह पहुंचा तो एक मिठाईवाले की दूकान के सामने वह बैठी थी। उसने जाके मिठाईवाले की गरदन पकड़ ली और उसने कहा, धन्य हो, हद कर दी, आठ आने के पीछे इतनी बदलाहट! कह देते की नहीं देना। इतनी परेशानी उठाई और सब काम ही बदल दिये मगर हम भी इन्तजाम पक्का करके गये थे, वह भैंस बाहर छोड़ गये थे। वह वहीं बैठी है, जहां हम छोड़ गये थे। सब बदल गया लेकिन भैंस वहीं। परमात्मा हमें खोज भी रहा हो

तो कैसे खोज पायेगा ? सब तो बदल जाता है रोज। जो कल सुबह हम थे वह आज सांझ नहीं है, आज सांझ हैं वह कल सुबह नहीं होंगे। सब बदल जाता है। उस जगह नहीं होते जहां थे, सब भाग जाता है, सब दौड़ जाता है और तेजी से भाग रहा है। एक क्षण को भी अगर हम खड़े हो जायें तो उसे मिलने में बाधा नहीं है। वह है ही सब जगह सिर्फ हमारे खड़े होने की प्रतीक्षा है। परमात्मा उसकी प्रतीक्षा में है जो खड़ा हो जाता है। जो खड़ा हो जाता है वह उपलब्ध हो जाता है। रास्ता नहीं है, मार्ग नहीं है, पंथ नहीं है, कोई गुरू नहीं है, आप हैं और परमात्मा है और आप भी दौड़ रहे इसलिये हैं अगर ठहर जायें तो आप फौरन मिट जायेंगे और परमात्मा ही रह जायेगा। जब तक दौड़ रहे हैं तब तक आप हैं और परमात्मा है क्योंकि दौड़ आपको भ्रम पैदा कर रही है कि मैं हूं। दौड़ गई, Fuel न मिला कि आप भी गये, आपका मन भी गया, तब जो शेष रह जाता है वह परमात्मा ही है। परमात्मा करीब है। हम मिट सकेंगे और वही रह जायें, वही हैं। हमारा होना नितांत झूठ है लेकिन इस झूठ को यह ख्याल पैदा हो गया कि हम सत्य को मिलके रहेंगे। अब ये झूठ सत्य से कैसे मिलेगा ? हम कहते हैं कि मुझे दर्शन करने हैं— परमात्मा के। मैं और दर्शन करूंगा ? मैं कैसे उसके दर्शन करूंगा ? मैं हो तो झूठ हूं। मैं न रह जाऊं तो उसके दर्शन हो जायें लेकिन मैं कहता हूं मैं दर्शन करूंगा, मैं मिलके रहूंगा, मैं उसको खोजके रहूंगा और मैं यह सब खोज और मिलने और दौड़ने में मजबूत होता चला जाता हूं और बाधा बन जाता हूं।

कल ज्ञान पर, फिर भक्ति पर, फिर कर्म पर, तीनों पर बात करूंगा। एकदम निषेधात्मक, विध्वंशक, तोड़ देने वाली। रास्ते टूट जायें तो वह द्वार पर खड़ा है।

●●●

मानो मत—करो और जानो

(आचार्य श्री की पत्र प्रेरणा से)

जागने का विचार भी नींद के टूटने की शुरुआत है।
प्यास का बोध भी सरोवर की तलाश का प्रारंभ है।
और सरोवर उतने ही निकट है, जितने निकट की निद्रा से जागरण है।
निद्रा और जागरण कितने भिन्न कितने विपरीत और फिर भी कितने निकट हैं ?
भिन्नता और विपरीतता स्थितियों में है।
लेकिन, चूंकि सोने और जागने वाला एक ही है, इसलिये निकटता भी है।
निकटता ही नहीं शायद दूरी ही नहीं है।
जागने की अभीप्सा करो पूर्णता से और जाग जाओगे।
प्यास से भर जाओ पूर्णता से और सरोवर सामने आ जायेगा।
लेकिन, मेरी मानकर मत बैठे रहना।
क्योंकि, मानने वाले अक्सर बैठे ही रह जाते हैं।
शायद, मान लेने की वृत्ति बैठे रहने का ही उपाय है।
नहीं—मानो मत; करो और जानो।

★★★

युक्रांद के लिए विशेष प्रेस रिपोर्ट

क्रांति की दहकती चिनगारियाँ : फूल की महकती पंखुड़ियों से

(अमृतसर में प्रेस रिपोर्टरस द्वारा आचार्य श्री से ली गई एक भेंट वार्त्ता से)

संकलन : श्रीमती कंचन सहगल, अमृतसर

प्रेस रिपोर्टरस–यह जो Controversy लोगों को दिख रही है तो क्या आपका दूसरे लोगों से फर्क है जो इतने upset हुए हैं, इसके बारे में आप हमें बताएं तो मेहरबानी होगी।

आचार्य श्री: Controversy बिल्कुल स्वाभाविक है उसमें कसूर उनका नहीं, कसूर मेरा है। क्योंकि जो भी मैं कह रहा हूं बहुत सी चीजों के विपरीत है, इसमें Tradition परम्परा का विरोध ही है और मेरा मानना है कि धर्म की कोई परम्परा न है, हो भी नहीं सकती। धर्म की जो अनुभूति है वह सदा नई है। वह कभी पुरानी हो ही नहीं सकती और जब भी किसी व्यक्ति को मिलती है वह, सदा ताजी और नई ही होती है। और धर्म की अनुभूति पर हम कोई Tradition नहीं बना सकते, बनाने से बासी और उधार हो जाती है। असल में धर्म का जो अनुभव है, उसे शब्द देते से ही, लिखते से, बोलते ही मर जाते हैं। तो living religion की कोई Tradition नहीं होती। Dead religion की Tradition होता है। सभी धर्म मरे हुए धर्म हैं। और धर्म कभी मर नहीं सकता वह धर्म तो जीवन्त अनुभव है। नानक को एक अनुभव होता है वह अनुभव तो जीवित अनुभव है। लेकिन सिक्ख जिसको पकड़े बैठा है, वह नानक का कहा हुआ शब्द उससे बाहर है। बुद्ध को जो अनुभव हुआ वह तो जीवित है लेकिन बुद्ध को मानने वाला जो पकड़े बैठा है वह बुद्ध का कहा हुआ शब्द नहीं, वह मृत है। धर्म एक है लेकिन मरे हुए धर्म बहुत हैं। क्योंकि जितनी बार भी लोगों को जीवित सत्य का अनुभव हुआ है उतनी बार ही वह कहने के बाद, शास्त्र बनने के बाद, वह मृत हो जाते हैं। इसलिये दुनिया में कोई ३०० धर्म हैं। और मेरी अपनी समझ यह है कि इन तीन सौ मरे हुए धर्मों के कारण जीवित धर्म की अनुभूति बहुत मुश्किल हो जाती है। क्योंकि यह हमें पकड़ लेते हैं चारों तरफ से। नानक जहाँ पहुंचे, बुद्ध जहाँ पहुंचे, मोहम्मद जहाँ पहुंचे, वहाँ हम नहीं पहुंच पाते। क्योंकि हम नानक, बुद्ध और कृष्ण के शब्दों को पकड़ कर उलझ जाते हैं। इसलिए मैं शास्त्र विरोधी भी हूं। मेरा मानना है कि धर्म का कोई शास्त्र नहीं, धर्म शास्त्र जैसा कोई शास्त्र नहीं। सब शास्त्र धार्मिक लोगों से लिखे हुए हैं लेकिन कोई शास्त्र धर्म शास्त्र नहीं है। ऐसा कोई भी शास्त्र नहीं जिसको पढ़कर धर्म उपलब्ध हो जाए। धर्म को उपलब्ध करना पड़ेगा अनुभव से। हां शास्त्र गवाही दे सकता है कि तुम्हें जो अनुभव हुआ वह नानक को भी हुआ, वह बुद्ध को भी हुआ था। शास्त्र ज्यादा से ज्यादा गवाही का काम कर सकता है लेकिन अनुभव देने का काम नहीं कर सकता। स्वभावतः परम्परा के विरोध में न कहूं, शास्त्र को कहूं, तो उससे धर्म नहीं मिलेगा। और सत्य के सम्बन्ध में कहता हूं उसे कभी Borrowed उधार शब्दों से नहीं पाया जा सकता क्योंकि वह

transferable discipleship नहीं है कि मुझको सत्य मिल जाये और मैं आपको दे सकूं। इसलिए मेरा कहना है कि धर्म के जगत् में गुरू नहीं हो सकता सिर्फ शिष्य हो सकते हैं। और शिष्य होने का मतलब है मेरा, कि सिर्फ attitude of discipleship, सीखने का एक भाव हो, धार्मिक आदमी से तो सीख सकता है हर तरफ से। और वह सीखता है और कहीं से भी सीख सकता है लेकिन गुरू नहीं होता। ऐसा वह आदमी नहीं होता जो कहता है मैं तुझे दूंगा क्योंकि धर्म की दुनिया में प्रवेश करने के बाद मैं तो बचता नहीं। देने वाला तो बचता नहीं कोई दावेदार तो हो नहीं सकता वहां। हां खोजने वाले किसी भी स्त्रोत से सीख सकते हैं लेकिन शिष्य ही होते हैं गुरु नहीं होते। मेरी समझ है कि गुरु के ख्याल की वजह से पंथ और सम्प्रदाय खड़े हुए हैं। अगर सीखने वाले पर हमारा जोर हो तो फिर पंथ और सम्प्रदाय की कोई जरूरत नहीं। कोई कहीं से भी सीख सकता है फिर सारा जगत् शिक्षा की जगह बन जाता है और सारा जगत् गुरु बन जाता है। सो परम्परा, शास्त्र, गुरु इन सबको मैं धर्म न कहूं तो विवाद उठना अत्यन्त स्वाभाविक है।

प्रेस रिपोर्टरस : आपकी Positive Philosophy of life जो है वह क्या है ?

आचार्य श्री : यह बहुत अच्छा सवाल आपने पूछा ! मेरी समझ यह है कि religion जो है वह Negative Philosophy of life है। Positive Philosophy, religion के पास होती ही नहीं। असल में, Negative mind ही religious mind है। इसका मतलब यह है कि जैसे एक आदमी जंजीरों में बंधा हुआ है और वह कहता है कि मैं जंजीरें तोड़कर स्वतन्त्र हो जाना चाहता हूं और कोई उससे पूछे कि तेरी Positive स्वतन्त्रता का अर्थ क्या है। Positive Freedom से तेरा क्या मतलब है। वह कहे कि मेरी जंजीरें टूटें, मेरी यह सारी जंजीरें टूट जाएं तो मुझे स्वतन्त्रता मिल जाती है। सारी जंजीरें टूट जायें तो मैं स्वतन्त्र हो जाता हूं। स्वतन्त्रता का असल में कोई Positive मतलब होता ही नहीं। स्वतन्त्रता का मतलब ही होता है Negative। और धर्म जो है वह मुक्ति है वह absolute freedom की खोज है। जहां हम परम स्वतन्त्र हैं, जहां कोई सीमा न होगी, कोई बन्धन न होगा, कोई रुकावट न होगी तो धर्म Basically Negative है। वह जहां-जहां बन्धन है वहां-वहां तोड़ देना है, तो मैं मानता हूं कि परमात्मा बन्धन है, गुरु बन्धन है, शास्त्र बन्धन है, सिद्धान्त बन्धन है, यह सारे बन्धन हैं। यह सब तोड़ देने हैं, इनके तोड़ते ही जो शेष रह जायगा वह अनुभूति ही Positive है। इन सबके तोड़ते ही जो शेष रह जायगी जिसको आप तोड़ ही नहीं सकते उसी को स्वरूप कहें, स्वभाव कहें, परम सत्य कहें, परमात्मा कहें, जो भी नाम दें। हमारे सारे बन्धन जहां टूट जायेंगे वहाँ शेष जो रह जायगा वह Positive है, लेकिन हमें जो करना पड़ेगा वह Negative होगा क्योंकि हमें तो सारे बन्धन तोड़ने होंगे। तो मेरी कोई Positive Philosophy है ही नहीं। क्योंकि मैं मानता ही यह हूं कि Positive Philosophy ही बन्धन बन जाती है। सिर्फ Negative mind ही स्वतन्त्र हो सकता है Positive mind तो बंध ही जाएगा। जिसको भी वह Positive कहे उससे वह बंध जाएगा। अगर वह कहेगा यह भगवान्, एक ऐसा भगवान् तो उससे वह बंध जायेगा। कहेगा ऐसा स्वर्ग तो उससे बन्धेगा, कहेगा ऐसा मोक्ष तो उससे बन्धेगा ! और नहीं जो बंधता किसी से सब तरह के बन्धन छोड़ देता है तो भीतर जब चेतना पर सब बन्धन गिर जाते हैं तो वह Freedom उपलब्ध होती है, वह ही सही स्वतन्त्रता है। वह हमारा स्वभाव है, वह हमारा Inherit Nature है। उसको तो Negativity से ही पाना होता है इसमें जो परम अनुभवीजन हुए हैं, वे नेती ही नेती कहते हैं, यह भी नहीं, यह भी नहीं। Not this, Not that यह भी छोड़ो वह भी छोड़ो और हम हमेशा पूछेंगे कि पकड़ें क्या ? Positive का मतलब होता है कि पकड़ें क्या ? लेकिन पकड़ना बंधन बन जाता है तो मैं कहता हूं कि पकड़ो ही न, बिना पकड़े ही जियो और अगर बिना पकड़े जी सकते हो Without any clinging तो ही मुक्त हो सकते हो।

पकड़ो ही मत । जहाँ पकड़े वहां बंधे । इसलिए पकड़ना ही मत। मेरे पास कोई Positive Philosophy नहीं वह भी दिक्कत है । वह भी इस Controversy का कारण है, क्योंकि जो भी आदमी छोड़ने को कहता है वह कहता है कि पहले हमें पकड़ने को तो बता दो । आप कहते हैं कि जो मुट्ठी में रखा है उसको छोड़ दो, तो हम कहां मुट्ठी बांधे ? मैं कहता हूं कि मुट्ठी ही छोड़ दो, मैं नहीं कहता कि मुट्ठी में जो है उसको छोड़ दो उससे क्या फर्क पड़ता है दूसरी चीज से मुट्ठी भर जायगी । मिटटी न होगी, पत्थर होगा, पत्थर न होगा, सोना होगा । मुट्ठी तो हर हालत में बंधी होगी और मेरा जोर यह है कि मुट्ठी खुली होनी चाहिए । इसलिए सवाल यह नहीं है कि पकड़े हो या नहीं ? पकडे हो तो मेरा कहना है सब तरह की Clinging जहां छूट जाती है A mind without clinging, without any positive clinging ।

प्रेस रिपोर्टरस :—Mental awareness should reach at a level where one should not depend on anything but be independent and self--sufficient mentally correct । दूसरा मेरा इसी सिलसिले में प्रश्न है एक । यह समझा जाता है कि Freedom from want शायद यह एक स्वतन्त्रता का, जहना स्वतन्त्रता का एक चिन्ह होता है तो इस सम्बन्ध में आपको कुछ कहना हो तो.....

आचार्य श्री : – पहली बात तो आप यह कह रहे हैं कि Awareness चेतना ऐसी जगह पहुंचनी चाहिए जहां हम बिना Dependence के रह सकें ! लेकिन वह ऐसी जगह पहुंचेगी तब, जब वह Dependence पूरी तरह से उभरे, वर्ना पहुंचेगी नहीं । जितनी हमारा Dependence तो वह तोलना शुरू करे वह उस जगह पहुंचेगा Awareness जहां Independent हो सके । Dependence तोड़ना हो उस जगह पहुंचने का रास्ता है और दूसरी बात Freedom from wants को मैं स्वतन्त्रता नहीं कहता । क्योंकि जिनको अब तक हमने इच्छाएं जरूरतें और Wants कहा है वह जीवन के अस्तित्व की अनिवार्यतायें हैं ।

प्रेस रिपोर्टरस—Freedom from wants, what I meant, was meeting of all wants. I mean, I don't think I should say that negatively speaking one should not bother about one's wants. But the fulfilment of all those desires and wants. I mean, in positive way । सो उस लिहाज में मैं कहता हूं सभी जरूरीयात किसी की पूरी हो जायें तो वह Independent हो जाता है । इस Concept को आप कैसे समझते हैं ?

आचार्य श्री :—मैं समझा आपकी बात । असल में इच्छाएं पूरी हों तो ही हम इच्छाओं को Transcend कर पाते हैं । जिस इच्छा को हम पूरा कर लेते हैं उसके ही हम पार चले जाते हैं । जब तक हम पूरा नहीं करते तब तक इच्छा पीछा करती है । चारों तरफ से घेरती है । पुरानी जो दृष्टि थी वह यह थी इच्छाओं को दबा दो Supress कर दो । Supress कर दोगे तो मुक्त हो जाओगे । नहीं मैं नहीं यह मानता । Supression, freedom नहीं है, Fulfilment ही Freedom है । Supression एक बहुत गहरे किस्म की गुलामी है जो अपने हाथों अपनी गुलामी है और कोई गुलाम बनाने वाला नहीं है । लेकिन हम ही अपने को बना रहे हैं । मेरी दृष्टि में इच्छाओं का कोई विरोध नहीं है । जीवन में जो भी वासनायें हैं, इच्छाएं हैं, जो भी Desires है, वह जैसे-जैसे पूरी हों, जिस भांति पूरी हों, ऐसा समाज चाहिए, ऐसी धारणाएं चाहिये, ऐसी व्यवस्था चाहिए जहां वह अधिकतम पूरी हो सकें । इसलिए मैं Poverty के पक्ष में नहीं हूं । और मेरा मानना कि Religion की Flowering, Affluent Society में ही होती है । गरीब समाज में नहीं होती । जैसे ही Affluence आता है, जहां सारी इच्छायें पूरी होने

लगती हैं वहां ही पहली दफा एक नई इच्छा का जन्म होता है। फिर हम सारी इच्छाओं के पार कैसे हो जायें ? जहां सारी इच्छायें पूरी होने लगती हैं, वहीं सवाल उठता है कि जीवन का सत्य क्या है ? परमात्मा क्या है ? मोक्ष क्या है ? इस जीवन की जब चारों ओर की इच्छायें पूरी होने लगती हैं, तभी सबसे गहरी इच्छा जन्म लेती है। गहरी इच्छा के शुरू होने के लिए भी जीवन की साधारण इच्छायें पूरी हो जानी जरूरी हैं। तो मैं Life Affirmative हूं। जीवन को मैं पूरा स्वीकार करता हूं। जीवन के समस्त रूपों को और जीवन की समस्त आकांक्षाओं को मैं स्वीकार करता हूं और उनको पूरा करके ही उनके पार जाने का मार्ग है। जहां वह पूरी होती हैं वहीं हम उनके पार जाते हैं। इच्छायें पूरी हों, इच्छाओं का दमन न हो, इच्छाओं को काटा पीटा न जाए, तो किसी तरह की अस्थिरता नहीं। किसी तरह के त्याग और तपस्या का मैं पक्षपाती नहीं। क्योंकि मेरा मानना है कि जिसे हम त्याग कहते रहे हैं Renunciation कि जिसे हम छोड़ना कहते रहे हैं वह सब का सब मनुष्य को कृपण (Cripple) करता है पंगु करता है। उससे उसको तोड़ डालता है। उससे चेतना विकसित नहीं होती, अविकसित ही रह जाती है। लेकिन एक और तरह का Renunciation है, एक और तरह का त्याग है जो चीजों के अनुभव से उपलब्ध होता है। एक तो त्याग यह है कि एक गरीब आदमी जिसने जिन्दगी में कुछ भी नहीं जाना, चीजों को छोड़ता है। एक बुद्ध जैसा आदमी जिसने जिन्दगी में चीजों को जाना और सब छोड़ता है। मैं इन दोनों के छोड़ने में फर्क मानता हूं। गरीब को छोड़ना पड़ता है, बुद्ध का छोड़ना बहुत सहज और Spontaneous है। चीजें व्यर्थ हो गई हैं, Useless हो गई हैं। तो जीवन के सम्बन्ध में जीवन की इच्छाओं, जरूरतों के सम्बन्ध में मैं Materialism को पूरी तरह से स्वीकार करता हूं और मैं मानता हूं कि ठीक धर्म Anti-Materialist नहीं हो सकता। और अगर Anti-Materialist होगा तो Anti-life भी होगा क्योंकि जीवन का सारा आधार भौतिक है। यह भी मेरी समझ है कि धर्म की बुनियाद तो Materialism होगी लेकिन उसकी Peak Spiritualism होगी। उसके मन्दिर के नीचे के पत्थर तो भौतिकवादी होते हैं लेकिन मंदिर का शिखर आध्यात्म का होता है और आध्यात्म और भौतिक मे Spiritualism और Materialism में, मैं बहुत फर्क नहीं मानता। क्योंकि मेरी यह भी समझ है कि शरीर और आत्मा में भी कोई विरोध नहीं और परमात्मा और सृष्टि में भी कोई विरोध नहीं। बल्कि यह दो चीजें नहीं, एक ही चीज के दो Aspects हैं। एक तरफ से जो हमें शरीर की तरह दिखाई पड़ता है वही दूसरी ओर से आत्मा की तरह अनुभव में आती है। और एक तरफ से जो हमें पदार्थ मालूम पड़ता है, दूसरी तरफ से परमात्मा की तरह दिखाई पड़ता है। ऐसी दो चीजें नहीं। मैं Dualist नहीं हूं। और मैं मानता हूं कि Dualism ने सारे धार्मिक चिन्तन को Ceasofanic कर दिया। इसने आदमी के दो हिस्से कर दिये, उसने कहा यह शरीर है यह दुश्मन है। यह परमात्मा है, तुम इसके खिलाफ लड़ते रहो। शरीर से लड़ो, प्रकृति से लड़ो, जीवन से लड़ो, तो जीवन से, शरीर से, प्रकृति से लड़के हम परमात्मा तक नहीं पहुंच सकते बल्कि इनमें पूरी तरह लीन होकर, इनमें डूबकर, इनके रस में पूरी तरह विलीन होकर ही हम परमात्मा तक पहुंच सकते हैं क्योंकि वह इनसे अलग नहीं। इसलिए मैं Life Negative नहीं Life Affirmative हूं लेकिन Religious Mind को मैं मानता हूं कि वह Negative Mind है। Nagetive Mind से मेरा मतलब है Freedom के लिहाज से। वह जहां २ बन्धन हैं वहाँ बन्धन को तोड़ने के लिए तत्पर है। उसकी आकांक्षा परम स्वतन्त्रता की है और द्वैत भी एक बन्धन है। क्योंकि जब मैं अपने आपको दो में बांट लेता हूं तो बहुत मुश्किल में पड़ जाता हूं क्योंकि बात ऐसी हो जाती है कि बाएं और दायें हाथदोनों को लड़ाऊँ और कोई भी न जीते। क्योंकि दोनों हाथ मेरे हैं। दोनों हाथ जीतें भी न और हारें भी न लेकिन मैं हार जाऊं क्योंकि दोनों हाथों को लड़ा लड़ा कर थक जाऊँ ! जिन्दगी को अब तक ठीक-ठीक धार्मिक शक्ल नहीं मिल सकी क्योंकि द्वैत ने हमें बहुत बुरी तरह

से दो खण्डों में तोड़ दिया है। अद्वैत मेरे मन में यह अर्थ रखता है। ऐसा अर्थ नहीं जैसा शंकर के लिए। शंकर के अद्वैत का अर्थ होता है कि संसार है ही नहीं और तब मैं मानता हूं कि शंकर द्वैतवादी हैं और संसार को बिना इंकार किये उनके पास उपाय नहीं है कोई। संसार को Deny करेंगे तथा अद्वैत को बचा पाएंगे। लेकिन जिसको हम Deny करते हैं Deny करने की वजह से ही वह है उसे इन्कार करना पड़ता है। माया Illusion कहना पड़ता है, तो भी वह है। अद्वैत का मेरे लिए मतलब यह है जो भी है वह एक है। उसमें कुछ भी इन्कार करने योग्य नहीं और कुछ भी लड़ने योग्य नहीं है उसमें। उसमें खण्ड करने की जरूरत नहीं। वह Integrated है। मैं पूरे जीवन को स्वीकार करता हूं Total Acceptabitity को आप मेरा Positive Element कह सकते हैं Total Acceptability मुझे सब स्वीकार है। जीवन जैसा है मुझे पूरी तरह स्वीकार है।

प्रेस रिपोर्टरसः—आपकी जो धारणा है वह आज के युग में एक नई तरह की धारणा है। जिसकी पहले परम्परा इस प्रचलित जमाने में नहीं है, तो यह ठीक रहेगा ? या आप इस तरह का कोई और उदाहरण दे सकेंगे कि और लोग भी हैं जो इस तरह का ख्याल रखते हैं।

आचार्य श्री—नहीं, यह परम्परा तो नहीं है, लेकिन यह नई बात भी नहीं है। इन दोनों बातों को ख्याल में ले लें। असल में जो भी मैं कह रहा हूं, जो भी आदमी धर्म को उपलब्ध हुआ है, उसने यही कहा है। और जब भी कोई उपलब्ध होगा तो यही कहेगा लेकिन उसकी परम्परा नहीं बन पाती। परम्परा बनाने वाले सदा दूसरे होते हैं। अगर बुद्ध पैदा हों या जीसस पैदा हों तो इनके आधार पर परम्परा बनती है लेकिन हममें से बनाने वाले और होते हैं। वह होते हैं जिन्हें धर्म का कोई अनुभव नहीं। परम्परा बनाने वाला समाज और होता है। Original Source तो वही होता है जो मैं कह रहा हूं। अगर मेरे पीछे भी दस लोग परम्परा बनायें तो वह मेरे खिलाफ होगी। तो मेरी यह भी धारणा है कि सारे धर्म की परम्पराएं जिनके नाम पर बनी हैं उनके ही खिलाफ। क्योंकि बनाने वाला जो आदमी है, वह दूसरा ही आदमी है, वह चारों ओर इकट्ठा हो के बनाता है।

नानक के पास जो लोग इकट्ठे होकर एक Organisation बनाते हैं एक System बनाते हैं वह और हैं उनके पास नानक का अनुभव नहीं, उनके पास सिर्फ नानक के शब्द हैं। उन शब्दों की भी उनकी अपनी ही व्याख्या है इसका नानक से कोई ताल्लुक नहीं। मेरी समझ यह है कि नानक के शब्दों को समझने के लिए भी नानक की हैसियत का अनुभव चाहिए। उसके बिना कुछ और उपाय नहीं। यह मामला ऐसा है कि एक आंख वाला आदमी प्रकाश देखता है और फिर उस पर अन्धे इकट्ठे होकर System बनाते हैं। तो फिर सब गड़बड़ हो जाता है। तो Tradition भी कोई नहीं जो मैं कह रहा हूं उसका। लेकिन जो मैं कह रहा हूं वह नया बिल्कुल नहीं। सदा वही कहा गया है और सदा उसी के आसपास उल्टी Tradition ही बनी है। और कितने मजे की बात है। बहुत बड़े मजे की बात इसलिए है कि दुनिया में जब भी धर्म की अनुभूति होती है तो जिनको भी धर्म की कभी अनुभूति हुई है वह उनकी ही बात कह रहे हैं। लेकिन जितने लोग पीछे तीर्थंकरों, गुरुओं और पैगम्बरों के पीछे खड़े हैं वह सब उसके दुश्मन हो जायेंगे, फौरन। वह इसलिए हो जायेंगे कि परम्परा जो है वह Deviate हो जाती है अनिवार्य रूप से और उल्टी हो जाती है। अब बुद्ध ने लोगों से कहा कि किसी की पूजा मत करना क्योंकि जिसकी तुम पूजा कर रहे हो वह तुम्हारे भीतर है लेकिन लोग बुद्ध की पूजा करने लगे। और लोगों ने कहा कि और चाहे किसीकी न करें हम किसी की भी न करें, लेकिन तुमने हमें ज्ञान बताया, तुम्हारी तो करेंगे हम। अब बुद्ध चिल्ला रहे हैं कि किसी की भी पूजा मत करना इसमें बुद्ध Include हैं अब बुद्ध कह रहे हैं कि किसी की मूर्ति मत बनाना क्योंकि

किसी मूर्ति से क्या मतलब है । तो लोगों ने कहा कि हम तुम्हारी मूर्ति तो कम से कम बनायेंगे ही । तो बुद्ध की जितनी मूर्तियां है जमीन पर उतनी किसी और आदमी की नहीं । लेकिन बुद्ध ने जितना विरोध किया है मूर्ति का उतना किसी और आदमी ने किया भी नहीं । और अब यह बड़े मजे की बात है कि पार्शियन और उर्दू में जो बुत शब्द है वह बुद्ध का बिगड़ा हुआ रूप है । इतनी मूर्तियां बनीं बुद्ध की कि मूर्ति और बुद्ध का एक ही मतलब हो गया । बुत जो है वह बुद्ध का ही प्रदर्शन है वह उससे ही बिगड़ा हुआ है । और जब पहली दफा सारी दुनिया में मूर्तियां गईं तो वह बुद्ध की ही गईं । लोगों ने कहा कि यह क्या है ? तो उन्होंने कहा बुद्ध । मूर्तियां और बुद्ध पर्यायवाची हो गईं । उस आदमी के नाम के साथ मूर्ति जुड़ गई जो मूर्ति का सबसे बड़ा दुश्मन है । बुद्ध ने कहा कि किसी की शरण में मत जाना । लोगों ने कहा 'बुद्ध शरणं गच्छामि' हम तुम्हारे शरणों में आते हैं और यह जो सारी तकलीफ है वह तकलीफ यह है कि धर्म तो जब भी उसका प्रकट होता है उसी व्यक्ति का ऐसा ही होता है । जीसस ने भी जो कहा क्रिश्चियन भी उसके बिल्कुल उलटे हैं । जीसस कभी जमीन पर लौटें तो उन्हें सबसे पहले क्रिश्चियन को ही Deny करना पड़े । यह तो मेरी बात ही नहीं है, यह मैंने कब कहा ? मगर सदा ऐसा होता है । मेरी दृष्टि में जो मैं कह रहा हूं वह परम्परा नहीं है लेकिन जो मैं कह रहा हूं वह नया भी नहीं, पुराना भी नहीं ।

प्रेस रिपोर्टरसः—आचार्य जी ! एक Last question मेरा और है कि आपके खिलाफ यह जो बगावत है खैर वह तो समझ में आई । हां ! अब आपका प्रोग्राम क्या है ।

आचार्य श्री—नहीं । मेरा कोई प्रोग्राम नहीं और बगावत की तरफ मेरी कोई दृष्टि नहीं । मैं मानता हूं कि वह स्वाभाविक है इसलिए मैं उसकी तरफ कोई Action नहीं लेता । मेरी उसमें कोई Fight नहीं है । जो ठीक लग रहा है वह मैं कहता जाता हूं जो मुझे ठीक लग रहा है मैं बताता चला जाता हूं जिसको उसका विरोध करना है वह उसका विरोध करता जाता है, वह वहीं खत्म हो जाता है उस विरोध करने वाले का विरोध करने के लिए मेरा कोई प्रोग्राम नहीं है । मुझे उससे कोई सम्बन्ध नहीं । मैं यह मानता हूं कि यह बिल्कुल स्वाभाविक है यह उतना ही स्वाभाविक है जैसे पूर्व से पश्चिम की दिशा हवा चल रही हो और मैं पूर्व की तरफ चलने लगूं तो हवा मुझे धक्के देने लगे । यह इतना ही स्वाभाविक है और सदा यह ऐसा ही स्वाभाविक रहा है, इसलिए वह जो मेरे खिलाफ बोल रहा है उसके खिलाफ मेरे पास कोई प्रोग्राम नहीं । मुझे जो कहना है वह मैं कहता चला जाऊंगा । मुझे जो ठीक लगता है वह मैं बताता चला जाऊँगा । जिसको उसका विरोध करना है वह उसका विरोध करता रहेगा । जिसको उसका पक्ष करना है वह उसका पक्ष करता रहेगा । यह दोनों मिलकर Tradition बनाते हैं । दोनों मिलकर Tradition बनाते हैं, हां ! मेरा कोई प्रोग्राम नहीं Tradition बनाने का । मेरी सदा चेष्टा है मैं मानता हूं मेरे पहले भी चेष्टा रही जो अब तक सफल नहीं हो सकी कि Tradition न बने । अगर मैं कोई प्रोग्राम उनके खिलाफ बनाऊं तो Tradition बनना शुरू हो जाती है इसलिए मेरा उसके खिलाफ कोई प्रोग्राम नहीं । उनसे मेरी कोई खिलाफत नहीं, मुझसे उनकी खिलाफत हो सकती है । मैं मानता हूं कि यह बिलकुल स्वाभाविक है जो सदा से ही ऐसा है इसमें कोई बात नई नहीं । ऐसा सदा न हो तो आश्चर्य की बात है । बहुत आश्चर्य की बात है । ऐसा है जैसे कोई Miracle हो गया है । कि जीसस आयें और उनको सूली न लगे बड़े आश्चर्य की बात है । नानक आयें और पत्थर न पड़ें तो समझना चाहिए यह Irrelevent हो गया जिससे पत्थर मारने की फुर्सत नहीं है किसी को । और या फिर दुनिया में क्रान्ति हो गई सारे लोग धार्मिक हो गए । इसलिए यह बिल्कुल स्वाभाविक है । इसलिए उसके खिलाफ मेरा कोई Reaction नहीं । उसे मैं स्वाभाविक मानकर स्वीकार कर लेता हूं । जो मुझे करना है वह मैं करता चला जाता हूं उनकी वजह से मेरे करने में कोई फर्क नहीं

पड़ता और अगर फर्क पड़े तो बहुत जल्दी वह मुझे अपनी जगह पर खींचकर खड़ाकर दें। यह बड़े मजे की बात है कि जिससे हम लड़े, जाने अनजाने हम उसी जैसे हो जाते हैं। इसलिए दुश्मन बहुत सोचकर चुनना चाहिए। दोस्त कोई भी चुना जा सकता है। दोस्त कुछ नहीं बिगाड़ सकता आपका लेकिन दुश्मन अनिवार्य रूपसे बिगाड़ रहा है जिससे हम लड़ते हैं उसी के Tacts से हमें लड़ना पड़ता है। और धीरे धीरे दुश्मन एक ही तल पर आ जाते हैं। उनमें कोई भी फर्क नहीं रह जाता, कोई फर्क रह ही नहीं सकता। लड़ना पड़ेगा उसी की Tact से। वही Tacts उसकी होगी, वही आपकी हो जाएंगी। सब खराब हो जाएगा। मैं तो लड़ता ही नहीं। क्योंकि मैं मानता हूं कि अगर किसी बात की Purity को बचाना हो तो उसे लड़ाई में नहीं डालना चाहिए। नहीं तो फिर खराब होनी शुरू हो जायगी। इसलिये अपना काम मैं करता हूं उनका काम वह करते हैं, बात वहीं खत्म हो जाती है। उनसे और लेना देना नहीं।

(पिछले जून माह में आचार्य श्री के अमृतसर कार्यक्रमों में जो घटनायें घटीं, उनको आपने १ जुलाई ७० के युक्रांद में सविस्तार पढ़ा। अमृतसर के प्रबुद्ध प्रेस रिपोर्टरस पर उस सबका इतना मार्मिक आघात हुआ कि उन्होंने विस्तार से आचार्य श्री की जीवन दृष्टि को समझकर दूर देश तक फैले हुए विचारकों तक पहुंचाना उचित समझा। उसी संदर्भ में उपर्युक्त प्रेस रिपोर्ट युक्रांद आप तक पहुंचा रहा है।)

***

अनुभूति : मेरी दृष्टि में

●

मेरी दृष्टि में अनुभूति सीढ़ी चढ़ने जैसी नहीं है, अनुभूति छत से कूदने जैसी है। इसमें कोई सीढ़ियां होती नहीं, लेकिन हमारा मन चढ़ना चाहता है। अहंकार चढ़ने में रस लेता है और धर्म कहता है कूद जाओ, चढ़ने का यहां कहीं उपाय नहीं है।

●

जीवन का अंतर्तम विश्लेषण :

"मैं प्रार्थना करूंगा कि परमात्मा आपको दुख दे।"

(आचार्य श्री की जीवन दृष्टि से)

—संकलन : श्री निकलंक, गाडरवारा

बंधी हुई विचार की लीकों पर चलने से कभी गंतव्य नहीं आता। समस्या का सीधा साक्षात ही हमेशा समाधान बनता है। जीवन में दुख है, जीवन दुख है, तो दुख के सीधे साक्षात से ही दुख का अतिक्रमण संभव है। असल में दुख बोध के तीव्र संताप से गुजरे बिना कोई शांति को उपलब्ध हो भी नहीं सकता।

शांति कह रहा हूं, सुख नहीं—क्योंकि मेरे देखे तो सुख और शांति दोनों अलग बातें हैं। सुख असुविधाओं का न होना है, जबकि शांति असुविधाओं में भी फलित हो सकती है।

बुद्ध या महावीर के पास सुविधाओं की, सुख की कमी न थी, किन्तु तो भी शांति नहीं थी इसीलिए वे उसे छोड़ तपस्या में उतरे।

वस्तुतः तो उनमें विरोध है, जो सुख को खोजता है वह शांति को उपलब्ध नहीं होता।

सुख या कष्ट के प्रति प्रतिक्रिया, सुख का स्वीकार और कष्ट का अस्वीकार—यही तनाव है। और शांति तो तब है, जब कोई तनाव नहीं हैं, कोई टेंसन नहीं है। इसीलिए वे भिन्न अर्थ रखते हैं।

क्या आप देखते नहीं हैं कि सुख स्वयं एक तनाव है, कि सुख भी आघात करता है ?

कष्ट और सुख दोनों ही उत्तेजनायें है, जबकि शांति का अर्थ ही है—अनउत्तेजित मन।

सुख और कष्ट दोनों ही अशाँति की अवस्थायें हैं। फर्क इतना ही है कि एक को हम प्रेम करते हैं एक को नहीं। एक प्रीतिकर है दूसरा अप्रीतिकर। एक गाँव में एक औरत मछली बेचने आई। वहां उसे अपने बचपन की एक सहेली, जो वहाँ मालिन थी, मिली। उस मालिन की प्रार्थना पर उस रात वह वहीं रुक गई। मालिन ने घर में सबसे हवादार जगह में जहां फूलों की सुगन्ध फैल रही थी, उसे सुलाया।

लेकिन काफी रात गये तक उस मछुआरिन को नींद नहीं आई। अतत: परेशान हो उसने मालिन को जगाया और कहा : 'फूलों की गंध मुझे कष्टकर हो रही है। नींद ही नहीं आती। कृपा करो और मेरे मछली के टोकरे को भिगोकर मेरे पास रख दो।'

भीगी मछलियों की गंध में उस रात फिर वह सुख की नींद सोई।

आप शायद ही मछलियों की गंध में सो सकें। अभ्यास से ही सुख और कष्ट की उत्तेजनायें निर्मित होती हैं। फिर अपरिचित उत्तजनायें डराती हैं, परिचित नहीं।

ठंडे और गरम में जैसे विरोध नहीं, खाली डिग्री का फर्क है, वैसे ही कष्ट और सुख में भी विरोध नहीं है—दोनों ही उत्तेजनाओं के रूप हैं, दोनों में ही शांति नहीं है। बस प्रीतिकर, अप्रीतिकर का भेद है।

शान्ति और सुख जैसे—अलग हैं ऐसे ही कष्ट और दुख दोनों भिन्न हैं, उनमें बहुत भेद है। दुख में बहुत ही कम लोग होते हैं, कष्ट में बहुत।

जो दुख में है वह शांति की खोज करता है। जो कष्ट में है वह सुविधाओं की सुख की आकांक्षा करेगा। कष्ट है इसलिए सुख चाहेगा क्योंकि कष्ट सुविधाओं का ही अभाव है।

महावीर, बुद्ध या राम और कृष्ण के वक्त की दुनियां वस्तुतः इसीलिए बेहतर और धार्मिक दिखाई देती है, क्योंकि तब कष्टों का अभाव था और स्वभावतः ही इस कारण सुखों की आकांक्षा भी न थी, उनकी खोज भी न थी। और अब जो साँसारिकता दिखाई देता है, वह है, क्योंकि कष्ट हैं। जितने कष्ट होंगे, लोग उतने ही सुख के आकांक्षी हो जायेंगे। यही स्वाभाविक भी है।

तथाकथित धार्मिकों, पूजापाठ करनेवालों, नाम जपने वालों के मूलाधार में यही सुख की आकांक्षा काम करती है।

महावीर या बुद्ध को कोई कष्ट नहीं थे, सारी सुविधायें उपलब्धथीं; लेकिन दुख था। कष्ट है सुविधाओं का अभाव और दुख——दुख है स्वयं का अभाव। दुख है स्वयं से अपरिचित होना, एक अर्थहीनता का बोध, एक दिशा हीनता का बोध।

हमारा सारा जीवन ही एक अर्थहीन यांत्रिकता हो गया है। रोज वही दुहराते हैं, जो आज किया है, जो कल किया था। जीवन रह गया है सहज सुविधाओं की पुनःरुक्ति मात्र। लगता है कोई गहरी जड़ता ही हमें इसे करने को बाध्य करती है।

कामू के उपन्यास का एक पात्र एक दोपहर सड़क के किनारे अपने छुरे को पैना कर रहा है। निकट ही एक बिलकुल अपरिचित व्यक्ति लेटा है। न जाने उसे क्या हुआ कि अकारण ही उसने उठकर उस लेटे हुए व्यक्ति की पीठ में छुरा भोंककर उसकी हत्या कर दी।

जब मामला कोर्ट में लाया गया और पूछा गया कि उसने हत्या क्यों की, तो उसने कहाकि मुझे अपने जीने का ही पता नहीं है कि क्यों जीता हूं, तो अपने कर्मों के लिए कारण कैसे बताऊँ।

आप चाहें तो मुझे फांसी दे दें। मैं कारण नहीं पूछूंगा कि क्यों मुझे फांसी दी जा रही है।

जब गवाह इकट्ठे किये गये और उसके परिचितों से उसके चरित्र के संबंध में पूछताछ की गई तो सबने कहा कि वह तो कुछ पागल मालूम पड़ता है।

उसके मैनेजर ने, जहां वह काम करता था कहा कि एक दिन वह आया और उसने मुझसे छुट्टी माँगी। मैंने पूछा : कल ही रविवार था, फिर आज तुम काम के दिन क्यों छुट्टी चाहते हो। तो उससे कहाकि इसके लिए तो मेरी मां जिम्मेदार है। और उसे भी क्या कहूं उसकी आदत ही हमेशा गलत वक्त पर काम करने की ही थी। आज सुबह वह मर गई। अब मुझे काम के दिन छुट्टी लेना पड़ रही है। चाहती तो वह कल छुट्टी के दिन भी मर सकती थी। लेकिन उसे भी क्या कहूं उसकी आदत ही कुछ ऐसी थी।

एक अन्य परिचित ने कहा कि मैंने जब मां की मृत्यु पर दुख प्रगट किया तो इसने कहा कि हां दुख की बात ही है। मैंने थियेटर के टिकिट ले रखे थे। एक तो वे बेकार गये और दूसरे रात घर पर गुजारना पड़ी।

कोर्ट में यह सब चलता था कि वह व्यक्ति चिल्लाया कि क्यों आप अदालत का, गवाहों का और मेरा वक्त व्यर्थ पूछताछ में बरबाद करते हैं । आपकी मर्जी हो तो फांसी दे दें । मैं कारण नहीं पूछूंगा क्योंकि यहां कोई कारण है ही नहीं । दुनियां में सब अकारण हो रहा है । और मजा देखिये, मुझे जब अपने जीने का ही पता नहीं है कि क्यों जीता हूं तो मैं अपने कृत्यों के लिए कैसे जबाबदेही करूं ?

ऐसे ही जब एक आंतरिक घबराहट एक अर्थहीनता, एक संताप, एक छटपटाहट का बोध पैदा होता है—वही दुख का अनुभव है ।

कामू का यह पात्र गहरे से गहरे दुख में है। वह एक गहरी अर्थहीनता का अनुभव कर रहा है ।

जब ऐसी आंतरिक पीड़ा अनुभव होगी तब दो विकल्प खड़े होते हैं । या तो साधना में उतरें और उस धन्यता को अनुभव कर लें जिसमें सब प्रसाद पूर्ण है, अर्थपूर्ण है, अपने को पालें स्वयं से मुक्त हो जायें । या आत्मघात करलें, अपने को नष्ट करलें, स्वयं से मुक्त हो जायें ।

लेकिन पहली संभावना ही अधिक प्रबल है क्योंकि दुख के बोध के साथ हो शांति की आकाँक्षा शुरू होती है । और शांति को उपलब्ध होने के लिए आतमघात नहीं आत्मक्रांति ही मार्ग बनता है ।

कष्ट से भरे लोग तो मंदिर में भी ईश्वर से सुख की ही कामना करते हैं । केवल दुखी आदमी ही मोक्ष की आकाँक्षा करता है । कष्ट से घिरे आदमी जमीन पर तो सुविधाओं की आकांक्षा करते ही हैं; परलोक में स्वर्ग में भी उन सबकी कामना करते हैं । वस्तुत: तो स्वर्ग भी उन सारी सुविधाओं का प्रलोभन मात्र है—भवन ऊंचो से ऊंची, कल्पवृक्ष, चिर यौवन, श्रम रहित जीवन और नशा-रहित शराब की सुविधाओं का, जिन्हें कि वे जमीन पर पाने का प्रयास करके भी नहीं पा सके होते हैं ।

मोक्ष तो केवल दुख के अनुभव करने वाले की आकांक्षा और अभीप्सा बनता है ।

बुद्ध राज्य संपदा सब छोड़कर निकल पड़े । हमें दिखाई पड़ता है उन्होंने महल छोड़ा, राज्य छोड़ा पर उन्होंने कहा : तुम्हें जहां भवन दिखाई पड़ते हैं, वहां मुझे लपटें दिखाई देती हैं । जिस आंतरिक अर्थहीनता और दुख की लपटों का उन्हें बोध हुआ था उनसे वे शाँति की ओर बढ़े ।

दुख और शांति, कष्ट और सुख का जोड़ है ।

संसार से दुख का हटाना एक व्यर्थ की बात है, दुख का बोध है कहां ?

दुख का बोध हो तो मनुष्य की आत्मा शांति की ओर चलने से बच नहीं सकती, शांति को उपलब्ध हुए बिना रह नहीं सकती ।

तो मैं प्रार्थना करूंगा कि परमात्मा आपको दुख दे, क्योंकि दुख बोध के तीव्र संताप से गुजरे बिना शाँति को कोई उपलब्ध हो ही नहीं सकता । फिर अभी तो आप शाँति चाहते भी नहीं हैं । चाहते होंगे सुख, चाहते होंगे सुविधायें; फिर वे चाहे पद की हों, धन की हों, या धर्म की, इससे बहुत भेद भी तो नहीं पड़ता । और ऐसी ही चाह को शांति का नाम देकर आया, भूल कर जाते हैं ।

शांति के लिए एक परिपक्वता चाहिए और वह परिपक्वता दुख से आती है ।

दुख का यही अनुभव तप है ।
दुख कैसे पैदा हो ?

इस अर्थहीनता में एक एक स्वांस लेना, एक क्षण जीना भी मुश्किल हो जाये यह स्थिति कैसे आये ?

दुख कैसे अनुभव हो ?

दूसरे लोग जिन्हें दुख का अनुभव हुआ और जिससे वे शांति को उपलब्ध हुए, उनका स्मरण करें।

बुद्ध थे, जितने वैभव हो सकते थे उनके बीच पैदा हुए । पैदा हुए हुए तब बाप बूढ़ा हो चला था। वे बहुत दिनों की आकांक्षा के फल थे। ज्योतिषी बुलाए गये सिद्धार्थ के बारे में पूछने के लिए। पूछा तो ज्योतिषियों ने कहा कि उम्र तो बहुत है, बस एक ही खतरा है, यह लड़का सन्यासी हो जायेगा।

और वही सबसे बड़ा खतरा है मां-बाप के लिये। तो शुद्धोधन घबराये।

पूछा उपाय क्या है ?

ज्योतिषियों ने कहा : बस एक ही उपाय है, जीवन इसे दिखाई न पड़े। जीवन के प्रति इसकी आंख बंद रहे। और स्मरण रहे जीवन तब तक दिखाई नहीं देता जब तक मृत्यु दिखाई न दे।

जीवन पर उसकी आँख बन्द रहे कि. इसकी सारी व्यवस्था की गई। यदि मुझसे पूछते तो मैं उल्टी ही बात कहता । असल में तो बुद्ध ज्योतिषियों की गलती से ही सन्यासी हुए ।

उन्हें एक ऐसे महल में रखा गया जहां सब युवा-सेवक थे । बूढ़ों का प्रवेश पूर्णतः निषिद्ध था । महल के बगीचे से कुम्हलाये हुए फूल और पत्ते रात हटा दिये जाते ।

इस तरह से पन्द्रह वर्ष तक मृत्यु जैसी चीज का बुद्ध को पता ही न था ।

लेकिन मृत्यु को देखने से कोई कैसे बच सकता है।

एक दिन युवा समारोह में भाग लेने रथ पर सवार हो वे जा रहे थे। रास्ते में एक श्वेत केशवाला बूढ़ा दिखाई दिया। देखा, कमर झुक गई है । सारा शरीर झुर्रियों से भरा है।

सिद्धार्थ ने सारथी से पूछा : इसे क्या हुआ है ?

पहली बार ही उन्होंने बूढ़ा व्यक्ति देखा था सो पूछना स्वाभाविक ही था।

सारथी ने बताया : बूढ़ा हो गया है। उम्र बढ़ने से व्यक्ति ऐसा ही हो जाता है।

क्या सब हो जाते हैं ?

हां सभी।

तत्काल पूछा : क्या मैं भी हो जाऊँगा ?

सारथी ने कहा : अपने मुंह से कैसे कहूं ?

लेकिन हां, अपवाद कोई भी नहीं।

थोड़ा और आगे बढ़े होंगे कि एक मुर्दा अर्थी पर जाता हुआ दिखाई दिया।

सिद्धार्थ को उत्सुकता हुई पूछा : उसे क्या हुआ है ?

सारथी ने बताया।

क्या मेरी भी मृत्यु होगी ?

सारथी ने कहा : कैसे कहूं। लेकिन जगत में अपवाद कोई भी नहीं है।

सिद्धार्थ ने कहा : तब रथ लोटा लो। मैं मर गया।

इसे मैं कहता हूं आँखें खोलकर जीना। आंखें खुली हों तो पड़ोसी की मृत्यु स्पष्ट दिखाई देती है।

आंखें खुली हों तो दुख का जागरण शुरू होता है।

लेकिन हमने तो अपने दिमाग में ट्रेन और कारों की तरह एक शाक एब्जार्वर लगा रखा है। कोई भी आघात आता है, कोई भी धक्का आता है वह उसे झेल लेता है पिटी पिटाई बात दुहराकर हम उसके आघात से बच जाते हैं, उसके सीधे साक्षात से बच जाते हैं।

किसी की मृत्यु पर "आत्मा अमर है" कहकर उस सम्भावना को जो हमारे भीतर दुख बोध पैदा कर सकती थी, अपने हाथों विनष्ट कर देते हैं।

जो इस शॉक एब्जारवर को अपने मन से निकाल देता है और आँख खोलकर जीवन का सीधा साक्षात करता है, वही केवल धार्मिक हो पाता है। तब दिखाई देता है कि रास्ते पर कितने गड्ढे हैं।

अगर सच ही किसी मौत को आप आंख खोलकर देख लें तो उससे एक गहरा दुख पैदा होगा और तब होगी शांति की खोज शुरू जिसे खोज पैदा होगी फिर वह खोज ही लेगा ! बिना पाये तो वह रुक ही नहीं सकता।

क्या आपके जीवन में दुख है ?

यदि नहीं है तो अभी आप बच्चे हैं। प्रौढ़ नहीं। उस बच्चे की तरह जो अभी अपने केवल कष्टों को ही जानता है, और जो उन्हें मिटाने में और छोटी मोटी आवश्यकता के पूरा करने में, छोटी मोटी सुविधाओं को जुटाने में लगा रहता है।

दुख बोध की लपटों में से गुजरने से ही प्रौढ़ता आती है और जीवन का स्वर्ण निखरता है, नही तो कितने ही लोग बच्चे ही मर जाते हैं।

अभी तो हम जैसे सब कुछ नींद में ही दुहराते चले जाते हैं। असल मे जो जागा नहीं है; और दुख को जो नहीं जानता उसका सारा तत्व ज्ञान दो कौड़ी का है।

बिना दुख की अग्नि के भीतर पैदा हुए कोई मार्ग नहीं है। वह अग्नि पैदा होती है तभी मार्ग मिलता है।

बिना प्यास पैदा हुए निकट में निर्मल जल से भरा सरोवर भी व्यर्थ है; क्योंकि पानी का अर्थ पानो में नहीं प्यास में है। असल में जिसे प्यास नहीं है उसे निकट में पानी की उपस्थिति का पता ही नहीं चलता। और जिसे प्यास लगेगी वह तो पत्थर को तोड़कर भी पानी निकाल लेगा।

ऐसे ही जो शांत होना चाहते हैं उन्हें भी कोई रुकावट नहीं है। बस मन का एक स्पष्ट विश्लेषण चाहिए।

जब हृदय में दुख की एक तीव्र ज्वाला स्पष्ट अनुभव होने लगे तब जानना कि रास्ता बहुत ज्यादा नहीं है। शांति न पाने की आतुर आकांक्षा और दुख की आग साथ हो तो सच ही कोई बाधा नहीं है।

दुख में प्रवेश करें वही तप है।

उसकी लपटों में सारी बाधायें भस्मीभूत हो जाती हैं।

जब सुख के सारे आधार टूटेंगे और आप निराधार में लटकते रह जायेंगे, तब कुछ अद्‌भुत घटता है। उस वक्त शक्तियां पूरे रूप में और पूर्ण क्षमता में प्रगट होती हैं।

केवल दुखी मनुष्य ही अपनी संपूर्ण आन्तरिक शक्तियों को जगा और जुटा पाता है। और तब उस क्षण में ऊर्जा के उस सम्पूर्ण जागरण में—उसे अनुभव होता है कि संपदा मेरे भीतर है। पाना कुछ भी नहीं है, सब उपलब्ध ही है। और फिर अनुभूति के उस क्षण में सारे तनाव समाप्त हो जाते हैं और चित्त शांत हो जाता है।

जब तक मुझमें और जो मुझे पाना है, उनमें फासला है, तब तक तनाव है। जब यह फासले गिरते हैं और द्वन्द समाप्त होता है उसी क्षण व्यक्ति शांति को उपलब्ध होता जाता है। ऐसी ही शांति में सत्य का दर्शन होता है।

पूर्ण शांत चित्त की अनुभूति ही सत्य है। इसलिए तो धर्मों का सीधा संबंध शांति से है।

और यह शांति उपलब्ध होगी जीवन के प्रति खुली आंख रखने से, दुख बोध की अग्नि में जीवन के स्वर्ण को निखारने से।

●▲●

जीवन संगीत से आलोकित : नई साज सज्जा में

ज्योति शिखा

(आचार्य श्री के विचारों की आध्यात्मिक त्रैमासिकी)

संपादक : श्री महिपाल

मूल्य : वार्षिक : ५ रु०
एक प्रति : १)२५ न० पै०

प्रकाशक : जीवन जागृति केन्द्र,
रूम नं० ५३, एम्पायर बिल्डिंग,
डा० डी० एन रोड, बंबई : १

फोन नं. २६४५१०

लुधियाना–यात्रा : रिपोर्ताज नहीं

शिव--

आचार्य श्री के साथ लुधियाना जाने का अवसर मुझे मार्च ७० में दोबारा लगा, इसे मैं अपना परम सौभाग्य मानता हूं। पहली बार अगस्त ६९ में गया था। इस बार हम कपिल भाई के आमंत्रण पर गये थे।

पर अब जबकि वहां से वापस लौट आया हूं मैं अपने को एक मुश्किल में पड़ गया अनुभव करता हूं। वह यह कि अमृतसर, जलंधर, चंडीगढ़, फगवाड़ा व दिल्ली आदि के जो मित्र (स्त्री पुरूष) लुधियाना आचार्य श्री के भाषणों से लाभ उठाने आये थे उनमें से बहुत कहते थे शिव आया है तो यहां कि रिपोर्ताज भी पढ़ने को मिलेगी ही। वापस जबलपुर आने पर यहां भी मित्रगण कहते हैं कि शिव गया था तब तो लुधियाना का आंखों देखा हाल युक्रांद में पढ़ने को मिलेगा और ७५ प्रतिशत हम भी लुधियाना हो आयेंगे। यही मेरे सामने मुश्किल खड़ी हो गई है। क्योंकि अब मुझसे लिखा नहीं जाता। दरअसल आचार्य श्री के साथ होने पर अब जो मुझे दिखाई पड़ता है वह सब लिखने में आता ही नहीं। उसे लिखने की चेष्टा करना भी मुझे धृष्टतापूर्ण मालूम पड़ता है। धृष्टता पूर्ण इसलिए कि जो लिखा नहीं जा सकता, उसे लिखना——। वह तो सिर्फ देखा व महसूस किया जा सकता है। उसका तो सिर्फ चुपचाप अनुभव किया जा सकता है। वास्तव में यह वह बिन्दु है जहां मेरा लेखक सर्वथा असमर्थ हो गया है। मुझे अभिव्यक्ति देने में इतनी असमर्थता कभी नहीं अनुभव हुई थी जितनी अब हुई है। लगता है अब कोई आचार्य जी के सम्बन्ध में बात करे अथवा कुछ पूछताछ करे तो रो पड़ूं या हंस पड़ूं या नाच पड़ूं या एकदम चुप ही रह जाऊं। इसके अलावा कुछ भी मेरी सामर्थ्य के बाहर हो गया है। मुझे याद आ रही है २३ मार्च की वह प्यारी रात जब आचार्य श्री सो गए और कपिल भाई ने मुझसे आचार्य श्री की चर्चा छेड़ी और फिर चर्चा को बीच में ही छोड़कर उछल पड़े और नन्हें बच्चों जैसा नाचने लगे। और मैं भी आकस्मात उनका साथ देने लगा था। सच तो यह है कि जिसे प्रत्यक्ष देखकर भी सब नहीं समझ पाते——कि यह क्या है ?– उसे शब्दों में कहने की कोशिश करने की मूर्खतापूर्ण हिम्मत कौन करे ?

वैसे तो कहा जा सकता है कि लुधियाना में आचार्य श्री को लगभग ३५ हजार लोग सुनते थे और कारों की लम्बी कतारें खड़ी रहती थीं। फिर लुधियाना जाना हो तो हो सकता है दिरेशी ग्राउन्ड श्रोताओं के लिए छोटा पड़ जाये। सुबह ध्यान के प्रयोग में पहले दिन ४०-४५ लोग ही थे पर बाद में हजार डेढ़ हजार लोग आने लगे थे। कृषि विश्वविद्यालय, शासकीय महिला महाविद्यालय, खालसा महाविद्यालय आदि शिक्षण संस्थानों में भी आचार्य श्री के उद्‌बोधन हुए। (कृषि विश्वविद्यालय में बोलने जब आचार्य श्री पहुँचे तो मुझे इस स्मृति से सुख मिला कि अगस्त ६९ में यहां के कुलपति ने अपने संक्षिप्त भाषण में कहा था कि मैं आशा करूंगा कि आचार्य श्री को सुनने का सौभाग्य हमें फिर मिलेगा और उनकी वह आशा पूरी हुई) एक्सटेन्शन लाइब्रेरी में प्रवेश सीमित था वहाँ रोटरी क्लब, लायन्स क्लब व ऐसे ही ६-७ अन्य क्लबों के सदस्य व कुछ विशेष अतिथि मात्र थे। इस तरह उस मीटिंग में लुधियाना का उच्चतम शिक्षित वर्ग ही उपस्थित था। यह सब हुआ और बहुत जोरदार हुआ। लेकिन मेरी दृष्टि में यह कोई खास बात न थी। भीड़ तो इकट्ठी की जा सकती है। हालांकि भीड़ भी

तथाकथित धर्म के पास इतनी आजकल नहीं इकट्ठी होती। उस धर्म से तो आजकल चिढ़ होती है, मुख्यत: पढ़े-लिखे लोगों को। वह अफीम का नशा जो हो गया है। और आचार्य श्री को तो पढ़े-बेपढ़े सभी वर्ग के लोग सुनते हैं। पढ़े लिखे लोग ज्यादा··· । इस सबके बावजूद मेरी दृष्टि में यह कोई खास बात न थी। आचार्य श्री के साथ खास बात जो देखने में आती है वह है उनके निकट-सानिध्य में आने वाले लोगों की अनूठी भाव दशा, उनका अव्यक्त व्याकुल प्रेम, उनकी नि:शब्द मौन प्रार्थना, उनकी कारुणिक करुणा, उनकी प्रेम पूर्ण पीड़ा, उनकी जिज्ञासा पूर्ण उत्कटता, उनकी पागल विह्वलता, उनकी विह्वल मंत्रमुग्धता, उनका मूक कृतार्थता-बोध, उनकी शिशुवत् सरलता, उनके अश्रुपूर्ण आनन्द, उनकी वेदना-पूर्ण मुस्कान, उनके मुक्त-मधुर हास्य, उनकी उच्छृखंल शिष्टता, उनका अप्रगट प्रेमपूर्ण सम्मान, उनकी चालों में प्रगट नृत्य, उनकी आंखों में थिरकती पुलक···उनके हवा में उड़ते निर्भार मन··· । और इन सब को शब्दों में कहा जाय ? कैसे संभव हो ? रेलवे स्टेशन पर विदा के वे क्षण ! उस सम्पूर्ण को देखकर जो बोध उस समय हुआ था, उसे कैसे कहा जा सके ?

'प्रेम' का एक रूप जो शब्दों में प्रगट हुआ था उसे ही यहां देकर शेष सब जो मौन था उसे मौन ही छोड़कर लुधियाना की स्मृतियों के पृष्ठ बन्द कर देना चाहता हूं। २४ मार्च की रात ११ बजे लुधियाना से हमें चल देना है। उसी संध्या ६ बजे, कुसुम बहन मेरे पास आकर खड़ी हो जाती हैं और पूछती हैं "शिव भाई, तुम रास्ते मे आचार्य जी के साथ ही रहोगे न ?" मैं कहता हूं : "नहीं, वे वातानुकूल में होंगे, मैं प्रथम श्रेणी में। इस तरह साथ रहकर भी साथ न रहेंगे।" वे पूछती हैं "तुम स्टेशनों पर उतर-उतर कर तो आचार्य जी को देख लेते होगे न ?" मैं कहता हूं "हां, यह तो जरूर करता हूं। स्टेशनों पर जाकर जरूर आचार्य जी को देख व मिल आया करता हूं।" वे कहती हैं— "जरूर देख आया करना शिव भाई। उनको कोई तकलीफ न हो।" यहां तक जो शब्दों में प्रगट हुआ, उसे मैंने बताया, अब अंतिम वाक्य कहते-कहते कुसुम की जो भाव दशा हो गई, उसे कैसे बता पाऊं ? इसलिए ही कहता हूं कि जो लिखने में नहीं आता, उसे लिखने की चेष्टा करना धृष्टता है, अन्याय है। आंखों में डबडबा आये वे पवित्र आंसू···उन आसुओं को मेरे प्रणाम ! शत् शत् प्रणाम।

***

"जीवन की कला का एक ही सूत्र है। दो विरोधों के बीच में अविरोध। दो तनावों के बीच में तनाव मुक्ति। दो अतियों के बीच संतुलन।"

"विज्ञान बाहर के जीवन पर काबू पाने की चेष्टा है, धर्म भीतर के जीवन पर काबू पाने की चेष्टा है।"

"जीवन बड़ी उल्टी चीजों पर खड़ा हुआ है। आती हुई सांस और जाती हुई सांस, दोनों जुड़ी हुई हैं। जन्म और मौत जुड़े हैं। दिन उजाले से भरा है, क्योंकि रात अंधेरी है।"

आचार्य श्री का प्रकाशित साहित्य

	हिन्दी	गुजराती	मराठी
१. साधना पथ	३।००	३।००	३।००
२. क्रांति बीज	३।००	२।५०	२।५०
३. सिंहनाद	१।५०	१।२५	३।००
४. मिट्टी के दिए	३।००	३।५०	—
५. पथ के प्रदीप	३।००	३।००	८।००
६. संभोग से समाधि की ओर	३।५०	३।५०	—
७. आचार्य रजनीश समन्वय, विश्लेषण, संसिद्धि	७।५०	—	—
८. मैं कौन हूं ?	२।००	२।००	—
९ नए संकेत	२।००	१।७५	—
१०. अज्ञात की ओर	२।००	२।००	—
११. सत्य की खोज	३।००	—	—
१२. अंतर्यात्रा	३।५०	—	—
१३. शांति की खोज	२।००	—	—
१४. सत्य के अज्ञात सागर का आमंत्रण	१।२५	१।५०	—
१५. सूर्य की ओर उड़ान	१।००	१।००	—
१६. प्रेम के पंख	०।७५	०।७५	०।७५
१७. कुछ ज्योतिर्मय क्षण	१।००	०।७५	—
१८. अमृत कण	०।६०	०।५०	०।५०
१९. अहिंसा दर्शन	०।५०	०।५०	०।५०
२०. नई दिशा, नई बात	०।३०	—	—
२१. सत्य की पहली किरण	६।००	—	—
२२. प्रभु की पगडंडिया	४।००	—	—
२३. क्रांति के बीच सबसे बड़ी दीवार	०।३०	—	—
२४. बिखरे फूल	०।३५	—	—
२५. जीवन और मृत्यु	—	१।००	—
२६. नए मनुष्य के जन्म की दिशा	०।७५	०।७५	—
२७. अस्वीकृति में उठा हाथ (भारत, गांधी और मेरी चिंता)	५।००	—	—

प्राप्ति स्थल :

[१] जीवन जागृति केन्द्र, रूम नं. ५३, एम्पायर बिल्डिंग, डा० डी. एन. रोड, बंबई : १

[२] मोतीलाल बनारसी दास, बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली–७।

[३] स्वदेशी वस्तु भंडार, जामनगर।

[४] आर. अंबानी एंड कं०, अपोजिट : जिमखाना, राजकोट।

[५] चंद्रकांत पटैल, आमोपालव, बैंक आफ इंडिया के सामने, रावपुरा, बड़ौदा।

[६] मोतीलाल बनारसी दास, नेपाली खपरा वाराणसी।

[७] मोतीलाल बनारसीदास, अशोक राजपथ, पटना।

[८] भारतीय संस्कृति भवन, माई हीरांगेट जलंधर शहर।

[९] नरसिंह भाई पटैल, सहकारी मुद्रणालय, कोठारी मार्ग, सुरेंद्र नगर।

[१०] सस्तु किताब घर, पथ्थर कुवां, रिलीफ रोड, अहमदाबाद।

[११] बालगोविंद कुबेरदास, गांधी रोड, अहमदाबाद।

[१२] सर्वोदय साहित्य भंडार, महात्मा गांधी मार्ग, इन्दौर—२

[१३] हीराभाई मेहता, पांचघर, ७०, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता : १

[१४] सुषमा साहित्य मंदिर, जवाहरगंज, जबलपुर।

[१५] युनिव्हर्सल बुक सर्विस, सिटी कालेज के सामने, जबलपुर।

[१६] श्री आर. के. पुंगालिया, १०१, टिम्बर मार्केट, पूना–२

[१७] श्री महेन्द्र कुमार मानव, विन्ध्याचल प्रकाशन, छतरपुर (म० प्र०)

[१८] श्री सौभाग्यचंद्र तुरखिया, २ प्रभात सोसाइटी, सुरेन्द्र नगर।

तुलसी मानस प्रकाशन की उपलब्धियाँ

१. **पीस आफ माइण्ड** (अंग्रजी में) रु० ३)

२. **क्वायटर मोमेण्ट्स** (अंग्रेजी में) रु० २)

३. **संसार का सार** (मू० रु० ३) (हिन्दी में) आधुनिक खेलों, वैज्ञानिक साधनों, जीवजन्तुओं वनस्पतियों आदि के द्वारा अध्यात्मक शिक्षा देने का विवेचन ।

४. **ज्ञान साधना** (मू० रु० २) लोनावला शिविर में पधारे हुए महापुरुषों के ज्ञानसाधना के प्रति संकेत ।

५. **विज्ञान से ज्ञान** (मू० रु० १) ऐक्सरे इत्यादि आधुनिक उदाहरणों को लेकर अध्यात्मविद्या नव-युवकों तक पहुंचाने का सफल प्रयास ।

६. **वेदान्त नवनीत** (मू० रु० १–५०) सन् १९६४ के अमृतसर के वेदान्त सम्मेलन में पधारे महात्माओं के प्रवचनों का सार ।

७. **वेदान्त का सरल बोध** (मू० रु० १)

८. **आध्यात्मिक पिक्टोरियल** (हिन्दी व अंग्रेजी) (मू० रु० ३) ज्ञान की गंभीर बातों को सूत्र तथा चित्र द्वारा प्रस्तुत ।

९ **मुमुक्षु** आध्यात्मिक उपन्यास (मू० रु० ५)

१०. **मन की शांति** (पद्य) (मू० रु० ४) अंग्रेजी मूल रचना 'पीस आफ माइड' का हिन्दी अनुवाद ।

११. **हमारी परंपरा** (मू० रु० २)

१२. **आराम सुख शांति और आनन्द** (मूल्य ५० पैसे)

१३ **अपनी ओर इशारा** (मूल्य १ रु०) अपनी ओर आने के सूत्र रूप इशारे ।

१४. **आध्यात्मिक डायरी** (मू० ५ रु०) सचित्र और दार्शनिक सूत्रों से परिपूर्ण दैनंदिनी ।

१५. **व्यवहारिक जीवन और परमात्मा** (मू० रु० १) (प्रेस में)

१६ **श्मशान यात्रा** (मू० ५० पैसे)

१७. **मेरे १०८ गुरु** (मू० रु० ३)

१८. **सजगता** (मू० रु० १) (प्रेस में)

१९. **विरोध-निरोध और स्वबोध** (मू० रु० १) (प्रेस में)

२०. **वेदान्त का वैज्ञानिक मनन** (मू० रु० १)

तुलसी मानस प्रकाशन

अन्तर्गत विभाग, केवल मार्कीटिंग कम्पनी

गुप्ता मिल्स स्टेट, रे रोड,

बम्बई---१०

वर्षों से हम

अपनी श्रेष्ठतम सेवायें

प्रस्तुत कर रहे हैं

STRESSCON CORPORATION

FOR

ANYTHING & EVERYTHING

IN

PRECAST PRESTRESSED CONCRETE

CONSTRUCTION

202, Lal Bahadur Shastri Marg,

Ghatkopar,

Bombay—86 AS

Telephones : 582593 & 582594

PLASTICIZERS

For the

Plastics Paint & Perfumery Industries

DOP—Dioctyl Phthalate

DIOP—Di-iso octyl Phthalate

DAP—Dialphanyl Phthalate

610 P—Dialfol 610 Phthalate

DBP—Dibutyl Phthalate

DMP—Dimethyl Phthalate

DEP—Diethyl phthalate

AVAILABLE FROM

Pioneers in manufacture of Phthalate Plasticizers.

INDO-NIPPON CHEMICAL COMPANY LIMITED

Alice Building, 339, D. N. Road, Bombay - 1

GRAM : PLASTICIZER TELEX : INNIPON 011 (2081) PHONE : 251723
252269

उत्तम तम्बाखू और कुशल कारीगरों से बनी

शेर और **पहलवान** छाप बिड़ी

भारत में अग्रणी है

मोहनलाल हरगोविंददास

जबलपुर म० प्र०

मानसेवी संपादक : अरविन्द कुमार । सह-संपादक : आलोक कुमार पाण्डे । व्यवस्थापक : श्री आर. आर. मिश्रा
स्वत्वाधिकारी प्रकाशक : अरविन्द कुमार, कमला नेहरू नगर, जबलपुर ।
मुद्रण : श्रीपाल प्रिंटर्स, राजा गोकलदास महल, से मानसेवी संपादक अरविन्द कुमार के लिये मुद्रित
वर्ष : २ ।। अंक : ३ ।। १ अगस्त १९७० ।। मूल्य : एक प्रति : ०.६० न० पै०
।। वार्षिक : १२ रु० ।।

WORLD FAMOUS

Kwality

ICE CREAM

a dream with cream

- Pure Milk & Cream.
- Genuine ingredients of high grade & quality.
- Super-Smooth.
- Properly Pasteurised & Homogenised.
- Processed under most Hygienic conditions.
- Conforming to P. F. A. Rules.
- Made by latest & imported machinery & technique.

MANUFACTURED BY

Kwality Ice Cream Co.,

OF BOMBAY & NEW DELHI

90, Industrial Area-A, LUDHIANA